Master of Arts (Economics) (DDE)

Semester – I

Paper Code – 20ECO21C1

MICRO ECONOMICS – I

व्यष्टि अर्थशास्त्र – I

DIRECTORATE OF DISTANCE EDUCATION

MAHARSHI DAYANAND UNIVERSITY, ROHTAK

(A State University established under Haryana Act No. XXV of 1975)
NAAC 'A+' Grade Accredited University

Material Production

Content Writer: *Dr. Parveen Kumar*

Copyright © 2020, Maharshi Dayanand University, ROHTAK

All Rights Reserved. No part of this publication may be reproduced or stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means; electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the written permission of the copyright holder.

Maharshi Dayanand University
ROHTAK – 124 001

ISBN :

Price : Rs. 325/-

Publisher: Maharshi Dayanand University Press

Publication Year : 2021

M.A. (ECONOMICS)

Semester - I

Micro Economics – I (20ECO21C1)

SYALLABUS

इकाई – 1

अर्थशास्त्र तथा व्यष्टि अर्थशास्त्र की प्रकृति और क्षेत्र, वास्तविक तथा आदर्शात्मक अर्थशास्त्र. मान्यताओं का आर्थिक अध्ययन में भूमिका, आर्थिक क्रियाओं का चक्रीय प्रवाह, गृहस्थी, फर्म, उत्पादन के साधन, संतुलन – आंशिक तथा सामान्य, स्थैतिक, तुलनात्मक स्थैतिक, गतिशील विश्लेषण, सीमांत तथा ढलान की संकल्पनाएं।

इकाई – 2

उपभोक्ता व्यवहार का अध्ययन, मांग फलन, मांग का नियम – गणनावाचक, क्रमवाचक और प्रकट अधिमान सिद्धान्त, आय – उपभोग वक्र, ऐंजल वक्र, प्रतिस्थापक और पूरक वस्तुएं। बाजार मांग वक्र, बैडवेगन, स्नोब और वेबलन प्रभाव के परिणाम। उपभोक्ता बचत की संकल्पनाएं।

इकाई – 3

उत्पादन के नियम : अल्पकाल व दीर्घकाल, आन्तरिक व बाहरी बचते व हानियां। लागत की संकल्पना, अल्पकाल व दीर्घकाल लागत वक्रों की व्युत्पति। बहुउत्पाद फर्म का साधारण अनुकूलनतम आगत संयोग। तकनीकी परिवर्तन तथा उत्पादन फलन – हिक्स के अनुसार, प्रतिस्थापन की लोच, कॉब डगलस और सी ई एस उत्पादन फलन की विशेषताएं।

इकाई – 4

कीमत का निर्धारण और पूर्ण प्रतियोगिता में फर्म व उद्योग का संतुलन, एकाधिकार (कीमत विभेदीकरण और द्विपक्षीय एकाधिकार समेत) एवम् एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता में संतुलन, कीमत नियंत्रण, कीमत प्रोत्साहन तथा उत्पादन कोटा के कल्याणकारी प्रभाव।

परिचय

हम जानते हे कि हमें अर्थशास्त्र सीमित संसाधनों का असीमित आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किफायतपूर्ण प्रयोग करना सिखाता है। जब अर्थशास्त्र का अध्ययन ईकाई स्तर पर किया जाता है तो यह व्यष्टि अर्थशास्त्र बन जाता है। व्यष्टि अर्थशास्त्र में व्यक्तिगत आर्थिक ईकाइयों के व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। व्यष्टि अर्थशास्त्र में हम यह अध्ययन करेंगे की एक उत्पादक किस तरह से आर्थिक निर्णय लेता है। सबसे पहले उत्पादक को यह तय करना होता है कि उपभोक्ता का व्यवहार कैसा है, क्योंकि एक उत्पादक जिस वस्तु को उत्पादित करने की योजना बना रहा है वह उपभोक्ता का ध्यान में रख कर बना रहा है। इसलिए व्यष्टि अर्थशास्त्र के अध्ययन में उपभोक्ता का सबसे ज्यादा महत्त्व हे। इसलिए व्यष्टि अर्थशास्त्र में उपभोक्ता की मांग का अध्ययन करेंगे। उसके बाद उत्पादक को उत्पादन की भी योजना बनानी पड़ती है। उत्पादन के लिए श्रम और पूंजी जैसे आगतों का प्रयोग करना पड़ता है। उत्पादन की योजना करने के बाद लागत की गणना करना आवश्यक हो जाता है क्योंकि प्रत्येक उत्पादन के उत्पादन करने के कुछ उद्देश्य होते है। जब उत्पाद को बाजार में बेचता है तो उत्पादक उन उद्देश्य को ध्यान में रखता है परम्परावादी अर्थशास्त्रियों के अनुसार एक उत्पादक का उद्‌देश्य लाभ अधिकतम करने का होता है। इसलिए उत्पादक आगम के लिए कीमत को तय करता है। कीमत तय उत्पाद के लिए बाजार से तय होती है। इस प्रकार हम बाजार का भी अध्ययन करेंगे। इस पुस्तक में हम व्यष्टि अर्थशास्त्र का वस्तु बाजार तक अध्ययन करेंगे। साधन बाजार और कल्याणकारी अर्थशास्त्र का अध्ययन व्यष्टि अर्थशास्त्र के दूसरे भाग में करेंगे।

डॉ0 प्रवीन कुमार

सहायक प्राध्यापक

राजकीय महाविद्यालय, जाटुसाना, रेवाडी

विषय सूची

इकाई	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
1.	अर्थशास्त्र का अर्थ एवम् महत्त्वपूर्ण संकल्पनाएं	1–16
2.	उपभोक्ता का संतुलन	17–48
3.	उत्पादन तथा लागत	49–80
4.	बाजार व कीमत निर्धारण	81–87

इकाई – 1

अर्थशास्त्र का अर्थ एवम् महत्त्वपूर्ण संकल्पनाएं

इकाई की रूपरेखा

1.0 परिचय
1.1 इकाई के उद्देश्य
1.2 अर्थशास्त्र की प्रकृति व क्षेत्र
  1.2.1 व्यष्टि अर्थशास्त्र की प्रकृति एवम् क्षेत्र
1.3 वास्तविक व आदर्शात्मक अर्थशास्त्र
1.4 आर्थिक विश्लेषण में मान्यताओं की भूमिका
1.5 आर्थिक क्रियाओं का चक्रीय प्रवाह
1.6 अर्थशास्त्र की कुछ महत्त्वपूर्ण संकल्पनाएं
  1.6.1 गर्हस्थी
  1.6.2 फर्म
  1.6.3 उत्पादन के साधन
  1.6.4 आंशिक तथा सामान्य संतुलन
  1.6.5 स्थैतिक, तुलनात्मकस्थैतिक तथा गतिशील विश्लेषण
  1.6.6 सीमान्त
  1.6.7 ढ़लान
1.7 सारांश
1.8 मुख्य शब्दावली
1.9 अपनी प्रगति जानिए के प्रश्न
1.10 अपनी प्रगति जानिए के उत्तर
1.11 अभ्यास हेतु प्रश्न
1.12 आप ये भी पढ़ सकते है

1.0 परिचय

फिल्म देखने के लिए हम सिनेमाघर जाते है। स्कूल में शिक्षा ग्रहण करने के लिए जाते है। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रत्येक गतिविधि का कोई न कोई उद्देश्य होता है अर्थशास्त्र का अध्ययन इसलिए किया जाता है क्योंकि यह हमें अर्थव्यवस्था के विभिन्न पहलुओं को समझने योग्य बनाती है। अर्थशास्त्र के अध्ययन का केवल एक ही कारण है दूर्लभता। हम सभी जानते है की मानव आवश्यकताएँ असीमित है और इनको पूरा करने वाले संसाधन सीमित है। इसलिए दुर्लभ संसाधनों को असीमित मानव आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आबंटित करने की आवश्यकता है। इसी कारण अर्थशास्त्र का सारोकार दुर्लभता की स्थिति में संसाधनों के चयन से है।

अध्ययन के हर क्षेत्र की अपनी भाषा और दृष्टिकोण होता है। उदाहरणतया गणित में अंकगणित की बात की जाती है। विज्ञान का सरोकार प्रयोगों से होता है। लेखाशास्त्र का संबंध लाभ और हानि से होता है। इसी प्रकार एक अर्थशास्त्री की भाषा में मांग, पूर्ति, बाजार, कीमत, उपभोक्ता, उत्पादक, फर्म आदि शब्दों का प्रयोग होता है। वर्तमान ईकाई में हम उन सभी संकल्पनाओं का प्रयोग करते है जोकि अर्थशास्त्र में प्रयोग होती है। ये संकल्पनाएं

हमें आगे की ईकाईयों में मदद करेंगी। इस ईकाई का मुख्य उद्देश्य आपको एक अर्थशास्त्री के दृष्टिकोण से परिचित कराना है।

1.1 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के निम्न उद्देश्य है।

1. अर्थशास्त्र व व्यष्टि अर्थशास्त्र की प्रकृति व क्षेत्र को समझना
2. वास्तविक व आदर्शात्मक अर्थशास्त्र में भेद करना
3. आर्थिक विश्लेषण में मान्यताओं की भूमिका को समझना
4. आर्थिक क्रियाओं के चक्रीय प्रवाह को समझना
5. अर्थशास्त्र की कुछ महत्वपूर्ण संकल्पनाओं को समझना

1.2 अर्थशास्त्र की प्रकृति व क्षेत्र

ज्ञान की किसी विशेष शाखा के बारे मे पूरी जानकारी केवल इसकी परिभाषा के आधार पर संभव नहीं है। इसके लिए अनुसंधान के उस क्षेत्र के स्वरूप और क्षेत्र की वैज्ञानिक खोज आवश्यक है।

अ. अर्थशास्त्र की प्रकृति

अर्थशास्त्र की प्रकृति से अभिप्राय ज्ञान का वह क्रमबद्ध और सम्पूर्ण अध्ययन है जो कारण और प्रभाव के संबधं की व्याख्या करता है। अर्थशास्त्र की प्रकृति से अभिप्राय है कि अर्थशास्त्र विज्ञान है अथवा कला है।

कुछ अर्थशास्त्रियों का तर्क है कि अर्थशास्त्र विज्ञान है। विज्ञान किसी भी विषय का क्रमबद्ध और संपूर्ण अध्ययन है।

विज्ञान में नियम होते है। इसी तरह अर्थशास्त्र में भी नियम है। जैसे की मांग का नियम और पूर्ति का नियम आदि। वैज्ञानिक दृष्टिकोण के लिए कुछ विशेषताओं का होना आवश्यक है। 1. तथ्यों को इकटठा करना, 2. ठीक–ठीक मात्रात्मक माप, 3. तथ्यों की क्रमबद्ध व्याख्या और 4. तथ्यों की जांच। ये सभी विशेषताएं अर्थशास्त्र में पाई जाती है। इसलिए अर्थशास्त्र को विज्ञान माना जा सकता है। कुछ अर्थशास्त्री यह मानते है कि अथशास्त्र विज्ञान नहीं है। उनके अनुसार अर्थशास्त्र के नियम निश्चित नहीं होते है। जैसे की मांग के नियम के अनुसार अन्य बातों के समान रहने पर कीमत के घटने पर मांग मात्रा बढ़ती है। और कीमत के बढ़ने पर मांग मात्रा घटती है। वर्तमान नियम में हमने अन्य बातों को समान मान लिया है जैसे की उपभोक्ता की आय। जबकि अन्य बातें जरूरी नहीं है कि समान रहे। अन्य बातों के समान नहीं रहने पर मांग का नियम अस्तित्व में नहीं रहेगा। इस प्राकर आर्थिक नियम मान्यताओं पर आधारित होता है। मान्यताओं के नहीं रहने पर आर्थिक नियम भी अस्तित्व में नहीं रहता है। दूसरा पक्ष यह है कि विज्ञान ने नियम की सार्वभौमिकता होती है अथवा ये सभी जगह पर समान रूप से लागु होते है। जबकि अर्थशास्त्र के नियम सभी परिस्थितियों और सभी समय में समान नहीं रहते है। अर्थशास्त्र के नियम समय और परिस्थितियों के बदलने पर बदल जाते है। तीसरा कारण है कि आर्थिक घटनाओं की ठीक–ठीक माप संभव नहीं है। चौथा कारण है की अर्थशास्त्र में प्रयोगशाला का प्रयोग नहीं होता है। पांचवा कारण यह है कि विज्ञान में भविष्यवाणियां की जा सकती है, जो कि निश्चित होती है, जबकि अर्थशास्त्र की भविष्यवाणियाँ निश्चित नहीं होती है। ये भविष्यवाणियाँ बदल सकती है।

हमने पहले दृष्टिकोण में अर्थशास्त्र को विज्ञान मानकर इसकी व्याख्या की है। दूसरा दृष्टिकोण अर्थशास्त्र को कला के रूप में देखता है,जिससे की सिद्धांतों और नियमों का प्रयोग समस्याओं के हल में किया जाता है। नियमों और सिद्धांतों का निर्माण करना विज्ञान कहलाता है। और इन नियमों का प्रयोग करना कला कहलाता है।

अर्थशास्त्र को कला बताने के बारे में कई पक्ष है। पहला पक्ष है कि अर्थशास्त्र हमें केवल नियमों की जानकारी नहीं देता बल्कि उन नियमों की मदद से समस्या का समाधान भी देता है। दूसरा पक्ष है कि अर्थशास्त्री मार्शल मानते है कि अर्थशास्त्र का उद्देश्य समाज के कल्याण को अधिकतम करना है। यह दर्शाता है कि अर्थशास्त्र एक कला है तीसरा पक्ष है की अर्थशास्त्र के नियमों का व्यावाहरिक प्रयोग भी होता है। चौथा पक्ष है कि अर्थशास्त के विभिन्न नियमों और सिद्धांतों का प्रयोग करके विभिन्न नीतियाँ और योजनाएं बनाई जाती है।

ब. अर्थशास्त्र का क्षेत्र

अर्थशास्त्र का संबंध असीमित आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सीमित संसाधनों का किफायती प्रयोग है। संसाधनों का इस प्रकार से उपयोग करना की ज्यादा से ज्यादा आवश्यकताओं की संतुष्टि हो सके। परन्तु अलग–अलग अर्थशास्त्रियों ने अलग–अलग समय पर अलग–अलग परिभाषाएं दी है। परिभाषाओं के बदलने के साथ अर्थशास्त्र के क्षेत्र में परिवर्तन होता गया है।। एडम स्मिथ, जोकि अर्थशास्त्र के जन्मदाता कहे जाते है। उन्होने अर्थशास्त्र को धन का विज्ञान कहा है। अर्थशास्त्र का सबसे पहले क्रमबद्ध अध्ययन एडम स्मिथ ने किया था। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों में से ही एक डेविड रिकोर्डो ने अर्थशास्त्र को धन के अध्ययन के साथ धन के वितरण का भी अध्ययन बताया है परन्तु सभी अर्थशास्त्री धन संबंधित परिभाषा से संबंध नहीं रखते है। ये अर्थशास्त्री धन संबंधित परिभाषा से सहमत नहीं है। एडम स्मिथ द्वारा दी गई धन पर आधारित अर्थशास्त्र की परिभाषा की कालाईल और रस्किन जैसे लेखकों ने आलोचना की। इस परिभाषा के कारण उन्होंने अर्थशास्त्र को दाल–रोटी का विज्ञान अथवा कुबेर–पूजा का नाम दिया। उनके अनुसार अर्थशास्त्र लोगों को स्वार्थी बना देगा। उससे सामाजिक और नैतिक पतन हो जाएगा। उनके अनुसार अर्थशास्त्र का संबंध केवल धन की उत्पति और उसके संचय पर केन्द्रित हो जाएगा। दूसरा इस परिभाषा में केवल वस्तुओं को लिया गया है और सेवाओं को बाहर रखा गया है।

इस परिभाषा का सबसे बड़ा दोष है की इस परिभाषा ने धन को प्राथमिक महत्व दिया है और मनुष्य को गौण स्थान दिया है। यह परिभाषा बताती है कि धन मनुष्य के लिए नहीं बलिक मनुष्य धन के लिए है। इस परिभाषा ने धन के संचय पर अधिक बल दिया है और कल्याण की अपेक्षा की है।

धन संबंधी परिभाषा में अनेक कमियों को देखते हुए ऐल्फ्रेड मार्शल ने एक नई परिभाषा दी है। मार्शल ने बताया की धन एक साध्य नहीं है बल्कि साधन है। धन जरूरत पूरा करने का एक साधन है। धन की सहायता से कल्याण को बढ़ाया जाता है। इसलिए मार्शल की परिभाषा को कल्याणकारी परिभाषा कहते है। मार्शल ने धन को कल्याण बढ़ाने का एक जरिया माना है। अर्थशास्त्र का संबंध धन को खर्च करके कल्याण को बढ़ाने से है। मार्शल ने अर्थशास्त्र की परिभाषा इस प्रकार दी है। ''राजनैतिक अर्थव्यवस्था अथवा अर्थशास्त्र मानवता का जीवन की साधारण क्रियाओं में अध्ययन है। यह व्यक्तिगत और सामाजिक क्रियाओं के उस भाग की परीक्षा करता है, जिसका कल्याण की भौतिक आवश्यकताओं की प्राप्ति और उनके प्रयोग के साथ अत्यंत निकट संबध है।'' मार्शल की परिभाषा के अनुसार अर्थशास्त्र मनुष्य के उन कार्यों का अध्ययन करता है, जो वह जीवन की साधारण दिनचर्चा में करता है। इस प्रकार मार्शल का अर्थशास्त्र मनुष्य की आय प्राप्ति और उसके खर्च करने से संबंधित है। मार्शल मानता है की अर्थशास्त्र में इस बात का अध्ययन किया जाता है कि किस प्रकार से मनुष्य धन का अर्जन करते है और अपनी संतुष्टि का अधिकतम करने के लिए किस प्रकार से खर्च करता है। मार्शल ने मनुष्यों के भौतिक कल्याण पर अधिक बल दिया है। मार्शल के अतिरिक्त अन्य अर्थशास्त्रियों पीगू, कैनन, बैवरिज आदि अर्थशास्त्रियों ने

भी कल्याण संबंधित परिभाषा का समर्थन किया है। वे भी मानते है की अर्थशास्त्र का संबंध मनुष्यों के कल्याण को बढ़ाने से है।

परन्तु मार्शल की कल्याणकारी परिभाषा की भी आलोचना हुई है। मार्शल की कल्याणकारी परिभाषा के सबसे बड़े कटु आलोचक रॉबिन्स है। रॉबिन्स ने 1935 में अपनी पुस्तक ।n Essay on the natureAnd significance of economic science में अर्थशास्त्र की नई परिभाषा दी। रॉबिन्स ने अर्थशास्त्र की नई परिभाषा देते हुए मार्शल की परिभाषा में अनेक कमियों का वर्णन किया। मार्शल अर्थशास्त्र को सामाजिक विज्ञान मानते है। जबकि रॉबिन्स अर्थशास्त्र को मानवीय विज्ञान मानता है। मार्शल ने वस्तुओं को भौतिक व अभौतिक के रूप में वर्गीकरण किया था जोकि अवैज्ञानिक व गलत विभाजन था। इस विभाजन की कोई आवश्यकता नहीं थी। मार्शल ने जिस कल्याण शब्द का प्रयोग किया है उसका मापन बड़ा ही कठिन है।

इस प्रकार रॉबिन्स ने अर्थशास्त्र की एक नई परिभाषा दी है। रॉबिन्स ने अर्थशास्त्र की परिभाषा इस प्रकार दी है कि ''अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जो अनेक उद्देश्यों और वैकल्पिक उपयोगों वाले दुलर्भ साधनों के संबंध में मानव व्यवहार का अध्ययन करता है।'' रॉबिन्स के परिभाषा का सम्बध दूर्लभ साधनों के किफायती उपयोग से है। अगर किफायतपूर्ण उपयोग नहीं करेंगे तो हमारी असीमित आवश्यकताओं की संतुष्टि नहीं हो पाएगी। साधन केवल सीमित ही नहीं होते है बल्कि उनके वैकल्पिक उपयोग भी होते है। जैसे की दूध केवल एक सीमित साधन ही नहीं है। बल्कि दूध के वैकल्पिक प्रयोग भी है। दूध केवल पीने के काम नहीं आता बल्कि दूध पनीर बनाने, दही बनाने मावा बनाने के आदि में प्रयुक्त होता है। वर्तमान परिस्थितियों में रॉबिन्स की परिभाषा उपयुक्त नजर आती है। रॉबिन्स की परिभाषा का संबंध आर्थिक समस्या से है। आर्थिक समस्या से ही चयन की समस्या उत्पन्न होती है। आर्थिक समस्या उत्पन्न होने के निम्न कारण है।

1. असीमित आवश्यकताएं

मनुष्य की आवश्यकताएं असीमित होती है। एक आवश्यकता के पूरा हो जाने पर हमारी दूसरी और तीसरी आवश्यकता उत्पन्न हो जाती है। आवश्यकताएं कभी भी पूरी नहीं होती है। आवश्यकताएं हमेशा बढ़ती रहती है। परन्तु आवश्यकताओं को पूरा कभी भी नहीं किया जा सकता है।

2. सीमित संसधनों

दूसरा तथ्य है कि हमारे पास आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जो साधन है। वे दुर्लभ और सीमित है। आर्थिक समस्या उत्पन्न होने का सबसे बड़ा कारण ही असीमित आवश्यकताएं है। अर्थशास्त्र के अध्ययन की जरूरत सीमित संसाधनों के कारण ही पड़ती है। अगर संसाधन असीमित होते तो अर्थशास्त्र का अध्ययन ही नहीं होता। क्योंकि ऐसी स्थिति में वस्तुएं मूल्यहीन हो जाती अथवा वस्तुएं हमें मुफ्त में मिलने लग जाती।

3. साधनों के वैकल्पिक उपयोग

साधन केवल सीमित ही नहीं होते है बल्कि साधनों के वैकल्पित उपयोग भी होते है। एक ही साधन को कई स्थान पर प्रयोग किया जा सकता है। हमारे पास साधन सीमित है। इसलिए हमें यह देखना है कि इन सीमित साधनों का प्रयोग किस जगह करे जिससे की हमारे उद्देश्य की पूर्ति हो सके और एक उपभोक्ता की अधिकतम संतुष्टि हो सकेऔर उत्पादक को अधिकतम लाभ हो सके। अगर केवल एक ही प्रयोग हो तो चयन की कोई समस्या ही नहीं होती। क्योंकि चुनाव तभी किया जाता है तब साधनों के वैकल्पिक प्रयोग होते है। इस प्रकार यह चुनाव करना है कि साधन को कौन सी जगह प्रयोग करे।

इस प्रकार रॉबिन्स ने धन की परिभाषा और कल्याण की परिभाषा से हटकर एक व्यवहारिक परिभाषा दी है। परन्तु रॉबिन्स की परिभाषा की भी आलोचना हुई है। रॉबिन्स ने सबसे पहले यही बताया था कि अर्थशास्त्र का संबंध

कल्याण से नहीं है। जबकि रॉबिन्स की परिभाषा में भी यह निष्कर्ष निकल रहा है कि सभी ईकाइया संसाधनों का उचित प्रयोग करती है। जिससें संतुष्टि को अधिकतम किया जा सके। हम जानते है कि संतुष्टि कल्याण से धनात्मक रूप से जुडी हुई है। संतुष्टि बढ़ने पर कल्याण बढ़ता है। इसलिए हम यह मान सकते है कि रॉबिन्स की परिभाषा भी एक कल्याणकारी परिभाषा है।

दूसरा रॉबिन्स ने अर्थशास्त्र को केवल मूल्य सिद्धांत तक ही सीमित कर दिया है। यह केवल इस बात का अध्ययन करता है की साधनों का वितरण किस प्रकार होगा। जबकि अर्थशास्त्र का क्षेत्र इससे कही अधिक है। अर्थशास्त्र से हम समष्टि रूप से आय व रोजगार के सिद्धांत का भी अध्ययन करते है। परन्तु कुल राष्ट्रीय आय व रोजगार के स्तर का निर्धारण रॉबिन्स की परिभाषा में नहीं आता है। रॉबिन्स की परिभाषा में अर्थशास्त्र का क्षेत्र काफी सीमित हो गया है। तीसरा रॉबिन्स की परिभाषा की इसलिए आलोचना होती है क्योंकि रॉबिन्स की परिभाषा में कही भी विकास के सिद्धांतों का अध्ययन नहीं होता है जबकि वर्तमान में आर्थिक विकास के सिद्धांतों का सबसे महत्वपूर्ण भूमिका है। रॉबिन्स की परिभाषा में साधनों का वितरण और आंवटन है। जबकि अल्पविकसित देशों में सबसे ज्यादा भूमिका विकास के अर्थशास्त्र की है। विकास के अर्थशास्त्र से ही गरीबी बेरोजगारी, असमानता जैसी समस्याओं का अध्ययन किया जाता है। आर्थिक विकास द्वारा जीवन स्तर को ऊपर उठाया जाता है। तीसरा रॉबिन्स ने अर्थशास्त्र को परिभाषित करते हुए अस्थिरता जैसी महत्वपूर्ण समस्या को छोड़ दिया है। जबकि विकसित और अविकसित देशों के सामने सबसे बड़ी चुनौती अस्थिरता की है। अस्थिरता को हम मंदी और तेजी के रूप में परिभाषित करते है। अस्थिरता होने पर बेरोजगारी बढ़ जाती है। रॉबिन्स की परिभाषा में अस्थिरता का कही भी प्रयोग नहीं हो रहा है।

प्रो. चार्ल्स शुल्ज सही लिखते है कि ''रॉबिन्स की परिभाषा भ्रामक है क्योंकि यह आधुनिक अर्थशास्त्र के दो प्रमुख विषयों आर्थिक विकास और अस्थिरता को प्रकट नहीं करती।''

रॉबिन्स की इस बात पर भी आलोचना की जाती है की उसने अर्थशास्त्र को सामाजिक विज्ञान के स्थान पर मानवीय विज्ञान बना दिया है।

अर्थशास्त्र की चौथी परिभाषा विकास के रूप में दी जाती है। रॉबिन्स की परिभाषा में विकास की समस्या का अध्ययन नहीं किया गया है। जबकि विकास का अल्पविकसित देशों में महत्वपूर्ण योगदान है। सैमुल्सन के अनुसार ''अर्थशास्त्र यह अध्ययन करता है कि कैसे व्यक्ति और समाज मुद्रा के सहित अथवा मुद्रा के बिना दुर्लभ उत्पादक संसाधनों जिनके वैकल्पिक प्रयोग है, उन्हें काम पर लगाने के बारे में, विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन के बारे में और उन्हें विभिन्न लोगों और समाज के वर्गों में वर्तमान और भविष्य में वितरित करने के बारे में चयन करते है।''

बैन्हम के अनुसार ''अर्थशास्त्र देश की राष्ट्रीय आय के आकर, वितरण और स्थिरता को प्रभावित करने वाले तत्वों का अध्ययन करता है।'' उपरोक्त सभी परिभाषाओं से पता चलता है कि अर्थशास्त्र में हम केवल वर्तमान में अपने सीमित संसाधनों का कुशलतम प्रयोग चाहते है। बल्कि दीर्घकाल में भी संसाधनों को उचित उपयोग करना सीखते है। अर्थशास्त्र का संबंध इष्टतम करने की समस्या के साथ है। उपरोक्त सभी परिभाषाएं अर्थशास्त्र के क्षेत्र को बढ़ा रही है।

अर्थशास्त्र की विकास संबंधित परिभाषा अन्य सभी परिभाषाओं से ठीक है। क्योंकि इस परिभाषा में हम अपने सीमित संसाधनों का इष्टतम प्रयोग करना तो सीखते ही है बल्कि दीर्घकाल में भी संसाधनों का प्रयोग करना भी सीखते है। भारत जैसे विकासशील देशों के लिए अर्थशास्त्र की विकास संबंधी परिभाषा ज्यादा उपयुक्त है। क्योंकि विकासशील देशों को अपने सीमित संसाधनों का प्रयोग इस तरह से करना है की गरीबी का निवारण हो, बेरोजगारी कम हो और असमानता भी कम हो।

अर्थशास्त्र की विषय सामग्री को दो भागों में बांटा जाता है। व्यष्टि अर्थशास्त्र तथा समष्टि अर्थशास्त्र। अर्थशास्त्र को व्यष्टि और समष्टि अर्थशास्त्र में रेगनार फ्रिश ने बांटा था। व्यष्टि अर्थशास्त्र में व्यष्टि स्तर पर दूर्लभ संसाधनों का आवंटन किया जाता है।

1.2.1 व्यष्टि अर्थशास्त्र की प्रकृति एवम्क्षेत्र

अ. व्यष्टि अर्थशास्त्र की प्रकृति

किसी भी विषय की प्रकृति से अभिप्राय है की वह विषय विज्ञान है या कला। किसी भी विषय का क्रमबद्ध अध्ययन विज्ञान कहलाता है। विज्ञान में नियम होते है। व्यष्टि अर्थशास्त्र को हम विज्ञान के रूप में भी परिभाषित कर सकते है। क्योंकि व्यष्टि अर्थशास्त्र में कई सारे नियम है जैसे मांग का नियम, पूर्ति का निमय, परिवर्तनशील अनुपात का नियम आदि। इसलिए व्यष्टि अर्थशास्त्र विज्ञान है।

परन्तु व्यष्टि अर्थशास्त्र कला भी है। कला से अभिप्राय विज्ञान के नियमों का व्यावहारिक प्रयोग है। मांग के नियम, पूर्ति के नियम परिवर्तनशील अनुपात के नियमों का अर्थशास्त्र में प्रयोग भी होता है। जैसी की मांग वक्र की ढलान निकालकर हम मांग की कीमत लोच की गणना कर सकते है। परिवर्तनशील अनुपात के नियमों का भी हम विभिन्न समस्याओं के समाधान में प्रयोग करते है।

ब. व्यष्टि अर्थशास्त्र का क्षेत्र

किसी भी विषय के क्षेत्र सें अभिप्रायः है कि उस विषय में हम किन– किन बातों का अध्ययन किया जाता है। व्यष्टि अर्थशास्त्र के क्षेत्र से अभिप्राय है की व्यष्टि अर्थशास्त्र में हम किस– किस समस्या का अध्ययन करते है। प्रोफेसर लर्नर ने कहा है कि ''व्यष्टि अर्थशास्त्र में अर्थशास्त्र को माइक्रोस्कोप द्वारा देखा जाता है। जिससे पता चल सके कि आर्थिक जीवी के लाखों कोश–व्यक्ति तथा परिवार उपभोक्ताओं के रूप में तथा व्यक्ति तथा फर्मे उत्पादकों के रूप में संपूर्ण आर्थिक जीवी के कार्यचालन में अपना योगदान किस प्रकार दे रहे है।''

व्यष्टि अर्थशास्त्र में निम्नलिखित क्षेत्रों को अध्ययन किया जाता है।

1. **उपभोक्ता व्यवहार –** व्यष्टि अर्थशास्त्र में आर्थिक निर्णय लेने वाली ईकाइयों का अध्ययन किया जाता है। इस क्रम में सबसे सुक्ष्म ईकाई उपभोक्ता है। एक उत्पादक किस वस्तु का उत्पादन करेगा ये इस बात पर निर्भर करता है कि उपभोक्ता किस वस्तु को पसंद करता है। उस वस्तु का उत्पादन होगा जिस वस्तु की मांग ज्यादा होगी।
2. **उत्पादक व्यवहार –** दूसरे क्रम में सबसे महत्वपूर्ण ईकाई उत्पादक है। उत्पादक वो ईकाई है जो किसी वस्तु में मूल्य का निर्माण करता है। उत्पादक व्यवहार में यह अध्ययन किया जा सकता है कि साधनों में परिवर्तन होने पर उत्पादन पर क्या प्रभाव पड़ेगा। साधनों में परिवर्तन का अल्पकाल में क्या प्रभाव पड़ेगा और दीर्घकाल में क्या प्रभाव पड़ेगा। उत्पादक व्यवहार में लागतों का भी अध्ययन करते है।
3. **वस्तु बाजार अध्ययन –** बाजार एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें उत्पादक और उपभोक्ता कीमत व मात्रा का समझौता करते है। अलग–अलग विशेषता के आधार पर अलग–अलग बाजार का वर्गीकरण किया जाता है। जैसे की पूर्ण प्रतियोगिता, एकाधिकार, एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता और अल्पाधिकार। किस वस्तु की कितनी कीमत होगी जैसे की मांग, लागत, बाजार के प्रकार। बाजार भी कीमत निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है।
4. **साधन बाजार अध्ययन –** साधनों के बाजार में उत्पादन के साधनों का क्रय विक्रय होता है। वस्तु बाजार की तरह साधन बाजार के भी अलग–अलग प्रकार है। अलग–अलग बाजारों में साधन कीमत निर्धारण अलग–अलग तरह से होता है। सीमांत उत्पादकता सिद्धांत साधन कीमत निर्धारण का महत्वपूर्ण सिद्धांत है।
5. **कल्याणकारी अर्थशास्त्र –** व्यष्टि अर्थशास्त्र का नीतिगत अध्ययन कल्याणकारी अर्थशास्त्र है।

1.3 वास्तविक व आदर्शात्मक अर्थशास्त्र

अ. वास्तविक अर्थशास्त्र

अर्थशास्त्र के अध्ययन के लिए यह जानना बड़ा आवश्यक है की अर्थशास्त्र वास्तविक है या आदर्शात्मक। केन्ज, रॉबिन्स, बोल्डिंग और मिल्टन फ्रीडमैन जैसे अर्थशास्त्रियों के अनुसार अर्थशास्त्र एक वास्तविक अध्ययन है। वास्तविक विज्ञान में किसी घटना की व्याख्या ऐसे की जाती है जैसे वो घटित होती है। गरीबी, बेरोजगारी और असमानता का अध्ययन वास्तविक अर्थशास्त्र में किया जाता है। वास्तविक अर्थशास्त्र में क्या है, क्या था, क्या होगा जैसे तथ्यों का अध्ययन किया जाता है।

ब. आदर्शात्मक अर्थशास्त्र

आदर्श विज्ञान वह है जो कुछ मूल्य, आदर्श या पैमाने निश्चित करने का प्रयत्न करता है। आदर्शात्मक दृष्टिकोण का सार है कि क्या होना या नहीं होना चाहिए। आदर्शात्मक अर्थशास्त्र में अर्थशास्त्री आर्थिक समस्या का हल बताते है। जबकि वास्तविक अर्थशास्त्र में अर्थशास्त्र आर्थिक समस्या की व्याख्या करते है। वास्तविक विज्ञान समस्या के बारे में जबकि आदर्शात्मक विज्ञान समस्या के हल के बारे में है।

1.4 आर्थिक विश्लेषण में मान्यताओं की भूमिका

अर्थशास्त्र के स्वरूप को समझने के लिए मान्यताओं को स्पष्ट ढंग से समझना महत्वपूर्ण है। जिन पर अर्थशास्त्र को सैद्धांतिक ढांचा बनाया गया है। अर्थशास्त्र की मुख्य मान्यताएँ निम्नलिखित है।

1. **अन्य बातें समान रहे** – अर्थशास्त्र का हर सिद्धांत और नियम अन्य बातें समान रहे की मूल मान्यता पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए मांग का नियम बताता है कि अन्य बातों के समान रहने पर कीमत के कम होने पर मांग बढती हैऔर कीमत के बढ़ने पर मांग कम होती है।
2. **विवेकशीलता** – अर्थशास्त्र का संबंध विवेकशील उपभोक्ताओं, उत्पादकों, मजदूरों, बचतकर्ताओं और निवेशकों के व्यवहार के साथ है। जैसे की एक उपभोक्ता कम खर्च करके अधिक संतुष्टि चाहता है। एक बचतकर्ता दी गई मात्रा से अधिक ब्याज प्राप्त करने की सोचता है। एक विवेकशील सरकार का लक्ष्य सामाजिक लाभ को अधिकतम करने का होता है।
3. **आर्थिक मनुष्य** – सभी नियम और सिद्धांत आर्थिक मनुष्य की मान्यता पर टिके है। एक आर्थिक मनुष्य वह औसत सामान्य व्यक्ति है, जो समाज का सदस्य है।
4. **संतुलन** – आर्थिक विश्लेषण में एक अन्य मान्यता है कि की आर्थिक नियम और सिद्धांत संतुलन से आरंभ होता है। कोई भी स्थिति संतुलन से आंरभ होती है।

किसी वैज्ञानिक अध्ययन का सैद्धांतिक ढांचा मान्यताओं के एक दिये गए समूह पर बना होता है। अर्थशास्त्र में भी कुछ मान्यताएं होती है। जिन पर अर्थशास्त्र के नियम टिके होते है। अर्थ शास्त्र में मान्यताओं की भूमिका निम्नलिखित है।

1. सिद्धांतों का सरलीकरण और विशिष्टता एक विशेष वैज्ञानिक सिद्धांत से संबंधित मान्यताओं का समूह अत्यंत महत्वपूर्ण रूप से जटिलताओं को सरल बना सकता है।
2. व्याख्यात्मक सिद्धांतों का निर्माण – एक विशेष सिद्धांत सम्भवतः एक विशिष्ट घटना की व्याख्या करने के लिए बनाया गया हो। ऐसे तर्कपूर्ण और पर्याप्त सिद्धांतों का ढांचा आवश्यक रूप से मान्यताओं के एक विशेष समूह के आधार पर बनाया जाता है। मान्यताएं बदलनेसे सिद्धांत के निष्कर्ष भी बदल सकते है।

3. सिद्धांतों में उचित चयन– सिद्धांत भविष्य के व्यवहार के बारे में भविष्यवाणी करते है यदिअलग – अलग सिद्धांत एक समान भविष्यवाणी करते है तो एक सिद्धांत को दूसरे पर कैसे अभिमान दिया जा सकता है। यह चयन करने के लिए उन सिद्धांतों में से प्रत्येक में ली गई मान्यताओं को महत्व प्राप्त होता है। प्रो0 जे. आर. हिक्स ने सुझाव दिया कि जिस सिद्धांत में मान्यतायें अधिक सरल या संख्या में कम हो, उन्हें अन्य सिद्धांतों की तुलना में अधिमान दिया जाना चाहिए।

1.5 आर्थिक क्रियाओं का चक्रीय प्रवाह

अर्थव्यवस्था विभिन्न आर्थिक एजेंट उत्पादक, उपभोक्ता, सरकार, पूंजी तथा शेष विश्व की मदद से कार्य करती है। ये आर्थिक एजेंट विभिन्न प्रकार की गतिविधियाँ करते है। इन आर्थिक गतिविधियों से आर्थिक एजेंट के बीच प्रवाह होता है। आर्थिक एजेंटों के बीच आर्थिक प्रवाह को आय का चक्रीय प्रवाह कहते है। एक आर्थिक ईकाई से दूसरी आर्थिक ईकाई के बीच हुआ लेन–देन आर्थिक या आय का चक्रीय प्रवाह होता है। यह प्रवाह हमेशा दो–तरफा होता है। यह एक तरफा नहीं होता है।

मान लीजिए कि व्यक्ति "A" व्यक्ति "B" को गेहूँ देता है और बदले में व्यक्ति "B" व्यक्ति "A" को चावल देता है तो इस लेन–देन का चक्रीय प्रवाह कहा जाएगा।

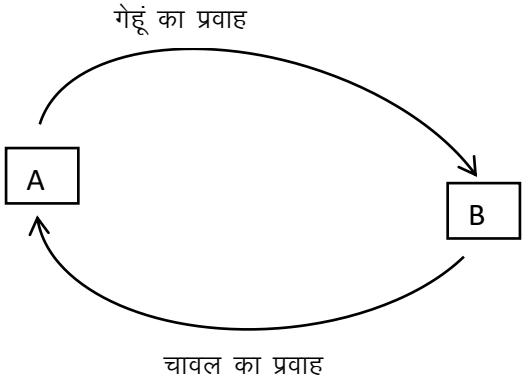

चित्र – 1.1

तीर की दिशा दिखाती है कि कौन प्राप्त कर रहा है यदि वस्तुओं के स्थान पर मुद्रा का विनियम होता है तो इससे वास्तविक प्रवाह के साथ–साथ मुद्रा का प्रवाह भी होता है। मान लीजिए की उपरोक्त उदाहरण में व्यक्ति ख व्यक्ति क से गेहूँ प्राप्त करता है और बदले में ख व्यक्ति क को मुद्रा देता है तो बाद वाला प्रवाह मुद्रा प्रवाह है। उसी प्रकार से यदि व्यक्ति क व्यक्ति ख को चावल की खरीद के बदले मुद्रा प्रदान करता है तो भी यह बाद वाला प्रवाह मुद्रा प्रवाह है। इन मुद्रा प्रवाहों को निम्न प्रकार से दिखाया जा सकता है।

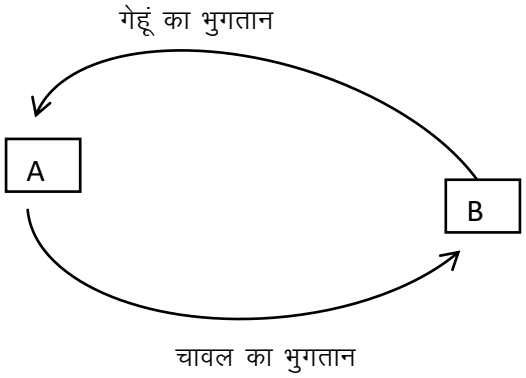

चित्र – 1.2

1.1 और 1.2 चित्र की व्याख्या से स्पष्ट है कि वास्तविक प्रवाह सीधी दिशा मे यानी बाई से दाई ओर चलता है। दूसरी तरफ मौद्रिक प्रवाह उल्टी दिशा यानी दाई से बाई और चलता है।

मुद्रा प्रवाह और वास्तविक प्रवाह में अन्तर

मौद्रिक एवम् वास्तविक प्रवाहों के अंतर को स्पष्ट रूप से समझना होगा। वास्तविक प्रवाह से अभिप्रायः वस्तुओं और सेवाओं के प्रवाह से है। वास्तविक प्रवाहों का मापन कठिन होता है क्योंकि इन्हें अलग–अलग वस्तुओं और सेवाओं को अलग–अलग इकाइयों में व्यक्त करते है। ऐसी इकाइयों को जोड़ा या घटाया नहीं जा सकता है। यही कारण है कि हम वास्तविक प्रवाहों को मौद्रिक प्रवाहों में व्यक्त करके उनका मापन करते है।

1.6 अर्थशास्त्र की कुछ महत्वपूर्ण संकल्पनाएं

प्रत्येक विषय की कुछ संकल्पनाएं या अवधारणाएं होती है। इन अवधारणाओं को समझ कर ही हम उस विषय को समझ सकते है। ईकाई के इस हिस्से में हम इन अवधारणाओं को समझने की कोशिश करेंगें। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण अवधारणाएं इस प्रकार है।

1.6.1 गृहस्थी

गृहस्थी एक ऐसी इकाई है जिसमें एक या कुछ लोगों का समूह मिल–जुल कर एक ही छत के नीचे रहता हैऔर सांझा उपभोग करते है। ग्रहस्थ कुल मांग की एक महत्वपूर्ण इकाई है। ग्रहस्थ क्षेत्र का समस्त खर्चे में से अधिकतर भाग उपभोग का होता है। कुल खर्चे में से कुछ प्रतिशत हिस्सा निवेश भी होता है। घर बनाने के लिए किया गया खर्च निवेश कहलाता है। जोकि परिवार क्षेत्र द्वारा किया जाता है।

1.6.2 फर्म

अर्थशास्त्र में फर्म का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। साधारण भाषा में फर्म एक निर्माण इकाई है जिसमें कि वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है। परन्तु अर्थशास्त्र में फर्म का अर्थ इस से भी बड़ा है। फर्म में केवल विनिर्माण इकाईयां ही नहीं आती बल्कि सेवा और कृषि क्षेत्र भी आते है। फर्म एक ऐसी उत्पादन इकाई है जोकि उत्पादन के साधनों का प्रयोग करके दी हुई तकनीक से वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन करती है।

1.6.3 उत्पादन के साधन

उत्पादन के साधनों की सहायता से उत्पादन किया जाता है। उत्पादन के चार साधन है, भूमि, श्रम, पूंजी, और उद्यमशीलता।

1.6.4 आंशिक और सामान्य संतुलन

संतुलन एक ऐसी अवस्था है जिसमें एक इकाई पर कार्य करने वाली विरोधी शक्तियों में इतनी समानता है कि वह ईकाई न तो एक दिशा में और न ही दूसरी दिशा में हिल सकती है इस प्रकार सन्तुलन विश्राम की स्थिति को प्रकट करता है।

गार्डनर ऐकले के अनुसार ''एक प्रणाली को संतुलन में तब कहा जा सकता है जब इसके सभी महत्वपूर्ण दरों में परिवर्तन नहीं होता, और जब परिवर्तन के लिए दबाव या शक्तियां नहीं होती जोकि महत्वपूर्ण दरों के मूल्यों में महत्वपूर्ण परिवर्तन पैदा करेगी।''

सामान्य बोल–चाल की भाषा में साम्य को विश्राम की अवस्था कहा जाता है। यह एक ऐसी अनुकूलतम स्थिति है जहाँ किसी व्यवस्था पर कार्य करने वाली परस्पर विरोधी शक्तियां एक दूसरे के साथ इस प्रकार सन्तुलित हो जाती है कि वह व्यवस्था उस स्थिति से विचलित होने की कोई प्रवृति नहीं रखती। उदाहरण के तौर पर पत्थर के लिए

टुकड़े को धागे से बांध कर हिला देने पर वह घड़ी के पैन्डुलम की तरह दायें– बायें हिलने लगता है। यदि उस टुकड़े को दुबारा न हिलाया जाये तो वह धीरे–धीरे एक स्थिति पर आकर रूक जायेगा। अतः वह स्थिति जिस पर पत्थर का टुकड़ा आकर रूक जाता है साम्य की अवस्था कहीं जा सकती है। परन्तु उपरोक्त व्याख्या अधूरी है क्योंकि पत्थर के टुकड़े के संतुलन में होने पर उसमें गति का पूर्णतः अभाव होता है। परन्तु अर्थशास्त्र के अन्तर्गत साम्य की दशा में गति का पूर्ण अभाव नहीं होता है। अर्थशास्त्र में गति होने पर भी संतुलन हो सकता है। इसलिए संतुलन एक विश्राम की अवस्था है परन्तु उसको गतिहीन की अवस्था नहीं कहा जा सकता। इसलिए यह कहा जा सकता है कि संतुलन एक विचलन रहित अवस्था होती है गतिरहित नहीं, अर्थात संतुलन में गति तो होनी चाहिए लेकिन इस गति की दर में परिवर्तन नहीं होना चाहिए। प्रो. जे. के मेहता के अनुसार ''अर्थशास्त्र में संतुलन गति में परिवर्तन की अनुपस्थिति को बताता है जबकि भौतिक विज्ञान में संतुलन, स्वयम् गति की अनुपस्थिति का सूचक है।''

आंशिक संतुलन

आंशिक संतुलन आर्थिक प्रणाली के एक भाग या अंग से संबंधित संतुलन है। अर्थव्यवस्था के प्रमुख भाग का संबंध उपभेक्ता, उत्पादन साधन, एक विशेष उत्पादन करने वाली फर्म या एक विशेष उद्योग के संतुलन के साथ है। एक विशेष वस्तु की कीमत का निर्धारण भी आंगिक संतुलन को प्रकट करता है। प्रो. स्टिगलर के अनुसार ''आर्थिक संतुलन वह होता है जो सीमित तथ्यों पर आधारित हो, इसका एक उपयुक्त उदाहरण किसी एक वस्तु की कीमत है जबकि विश्लेषण करते समय अन्य सभी वस्तुओं की कीमतें यथास्थिर मान ली जाती है।'' आंशिक साम्य के विचार का प्रतिपादन यद्यपि फ्रांसीसी अर्थशास्त्री अगस्टिन कुर्नो तथा जर्मन अर्थशास्त्री हंस वान मेगोल्ट द्वारा किया गया था परन्तु विश्लेषण को इस तकनीक को नयी साज–सज्जा प्रदान करने का श्रेय डा. मार्शल को दिया जाता है। पूर्ण प्रतियोगिता के अन्तर्गत कीमत निर्धारण के मार्शल के विश्लेषण में एक दी गई वस्तु का मांग फलन इस मान्यता पर निर्भर होता है कि अन्य वस्तुओं की कीमते समान रहती है। यदि अन्य वस्तुओं की कीमत को स्थिर मानकर ही हम मांग के नियम की व्याख्या करते है। क्योंकि अगर अन्य वस्तुओं की कीमतें स्थिर नहीं रहेंगी तो मांग का नियम अपना कार्य नहीं करेगा यानि कीमते कम होने पर मांग नहीं बढ़ेगी और कीमत के बढ़ने पर मांग कम नहीं होगी।

आंशिक संतुलन के अनेक महत्व है। जैसे की कुछ विशेष प्रकार की बाधाओं द्वारा उत्पन्न आर्थिक समस्याएं ऐसी भी होती है जिनका प्रभाव किसी उद्योग विशेष तक ही सीमित होता है। ऐसी समस्याओं और उनके प्रभावों का अध्ययन केवल आंशिक संतुलन द्वारा ही किया जा सकता है। उदाहरणार्थ माना कि किसी औद्योगिक केन्द्र में स्थापित विभिन्न प्रकार के उद्योगों में से केवल किसी एक विशेष–उद्योग के श्रमिकों द्वारा हड़ताल कर दी जाती है। ऐसी स्थिति में चूंकि हड़ताल का प्रभाव अधिकांश रूप से उसी उद्योग विशेष पर और उसके श्रमिकों तक ही सीमित रहेगा। अतः यहां हड़ताल से उत्पन्न समस्या का अध्ययन आंशिक साम्य–विश्लेषण द्वारा ही किया जा सकता है, न कि सम्पूर्ण श्रमिक–वर्ग के सामान्य विश्लेषण द्वारा।

दूसरा जब भी कोई आर्थिक समस्या उत्पन्न होती है तो उसके प्रभाव तीन स्तरों पर अनुभव किये जा सकते है। प्रथम स्तरीय प्रभाव – द्वितीयक प्रभाव तथा अन्य प्रभाव। इन तीनों प्रकार के प्रभावों में से प्रारंभिक का विश्लेषण केवल आंगिक संतुलन के द्वारा ही किया जा सकता है।

परन्तु आंशिक संतुलन की कुछ सीमाएं भी है। जैसे की यह विश्लेषण अन्य बातें समान रहें की मान्यता पर आधारित है जबकि वास्तविक जीवन में ऐसा नही हो पाता। उसका दूसरा दोष यह है कि उसमें अर्थशास्त्र के केवल एक भाग का ही अध्ययन करता है और समूची अर्थ–व्यवस्था का एक साथ व्याख्या नहीं करता है। जो बात एक फर्म या उद्योग के लिए ठीक होती है, आवश्यक नहीं कि वह सम्पूर्ण अर्थ व्यवस्था के लिए भी ठीक हो। इसलिए इस दृष्टि

से आंशिक साम्य, सम्पूर्ण अर्थ व्यवस्था के अध्ययन के लिए अनुपयोगी सिद्ध होता है और उसके लिये हमें सामान्य संतुलन के विश्लेषण का सहारा लेना पड़ता है।

सामान्य संतुलन

सामान्य संतुलन का संबंध आर्थिक प्रणाली के किसी भाग या अंग के संतुलन से नहीं बल्कि पूरी आर्थिक प्रणाली के संतुलन से होता है। प्रो. स्टिगलर के अनुसार ''सामान्य संतुलन का सिद्धांत अर्थ व्यवस्था के सभी भागों के पारस्परिक संबंधों का अध्ययन है।''

उदाहरणार्थ किसी एक वस्तु की कीमत–निर्धारण यदि आंशिक साम्य का विषय है तो देश का सामान्य कीमत–स्तर, सामान्य साम्य के अन्तर्गत सम्मिलित किया जायेगा। सामान्य संतुलन या साम्य एक ऐसा व्यापक विश्लेषण है जो आंशिक साम्य को भी अपने अन्दर समेट लेता है। प्रो. रिचार्ड लेफ्टविच के अनुसार ''सम्पूर्ण अर्थ–व्यवस्था उस समय सामान्य संतुलन की स्थिति में होगी जब अर्थ व्यवस्था की सभी ईकाईयाँ एक ही साथ अपना–अपना आंशिक संतुलन प्राप्त कर लेती है।''

जहाँ तक सामान्य संतुलन की धारणा के प्रतिपादन व विकास का प्रश्न है, सबसे पहले लोसेन स्कूल के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री डॉ लियोन वालरस द्वारा इस धारणा का विकास किया गया था। उनके बाद जेबेन्स, हिक्स, कार्ल मैंजर, पैरेटो, सेम्युअलसन, टिनबर्जन और क्रिश्च आदि अर्थशासत्रियों ने इस धारणा को और ज्यादा विकसित किया था। सामान्य संतुलन के कुछ महत्व इस प्रकार है।

1. सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था का चित्रण–सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था को केवल सामान्य संतुलन द्वारा ही समझा जा सकता है।
2. पारस्परिक निर्भरता का अध्ययन–अर्थव्यवस्था में कार्यरत विभिन्न आर्थिक चर एक –दूसरे से स्वतंत्र नहीं होते बल्कि एक –दूसरे पर निर्भर करते है और एक –दूसरे को प्रभावित करते रहते है। सामान्य संतुलन विश्लेषण अर्थव्यवस्था के विभिन्न अंगों के बीच पाये जाने वाले अन्तसम्बन्धों और पारस्परिक निर्भरता के अध्ययन का संभव बनाता है।
3. नीति निर्धारण में महत्व–यह एक ऐसा विश्लेषण है जिसके द्वारा हम किसी आर्थिक घटना को निर्धारित करने वाले विभन्न तत्वों का सामूहिक अध्ययन करके, उनमें से सबसे उपयोगिता वाले आर्थिक तत्वों को छांट लेते है और फिर उनके आधार पर उचित आर्थिक नीति का निर्माण कर सकते है।
4. आदा–प्रदा विश्लेषण का आधार–नोबल पुरस्कार विजेता डॉ डब्ल्यू लियोनटीफ द्वारा प्रतिपादित आदा–प्रदा तकनीक का वास्तविक आधार सामान्य संतुलन विश्लेषण ही है। आदा–प्रदा विश्लेषण 20वीं शताब्दी के आर्थिक जगत का महानतम् अविष्कार है, जिसका प्रयोग अर्थव्यवस्था की पारस्परिक निर्भरताओं तथा जटिलताओं को समझने के लिए और अन्तः उद्योगों संबंधों का सामयिक विश्लेषण करने की दृष्टि से किया जाता है।

यद्यपि आजकल सामान्य संतुलन का महत्व बढ़ रहा है। परन्तु कुछ अर्थशास्त्री ऐसे भी है जो इस विश्लेषण की अपेक्षा आंशिक संतुलन विश्लेषण को अधिक महत्वपूर्ण मानते है। प्रो जार्ज स्टिगलर के सामान्य संतुलन विश्लेषण को मिथ्या एवम् भ्रामक विश्लेषण का नाम दिया है। उनके अनुसार कोई भी विश्लेषण सम्पूर्ण नहीं हो सकता है। सभी संबंधित तथ्यों पर एक साथ विचार नहीं किया जा सकता है।

1.6.5 स्थैतिक, तुलनात्मक स्थैतिक तथा गतिशील अथवा प्रावैगिक विश्लेषण

आर्थिक स्थैतिकी

स्थैतिकी, शब्द भौतिक विज्ञान से लिया गया है। उसका अर्थ है विश्राम की हालात या गतिहीनता। स्थैतिक अवस्था एक ऐसी अर्थव्यवस्था से है जिसमें गति तो होती है परन्तु इस गति की दर में कोई परिवर्तन नहीं होता। सरल शब्दों में, स्थैतिक अवस्था में अर्थव्यवस्था के विभिन्न अंगों जैसे उत्पादन, उपभोग, जनसंख्या, मांग, एवम् पूर्ति आदि

में परिवर्तन की कोई प्रकृति नहीं होती अर्थात ये आर्थिक तत्व स्थिर बने रहते है। प्रो. बोल्डिंग के अनुसार ''एक समान गति से लुढ़कती हुई गेंद स्थैतिक संतुलन की स्थिती में कही जायगी। इससे भी अच्छा उदाहरण एक ऐसे जंगल का माना जायेगा जिसमें पेड उगते है और मर जाते है। परन्तु संपूर्ण जंगल की बनावट में फिर भी कोई परिवर्तन नहीं होता है। स्थैतिकी की धारणा को चित्र की सहायता में दर्शाया जा सकता है।

चित्र – 1.3

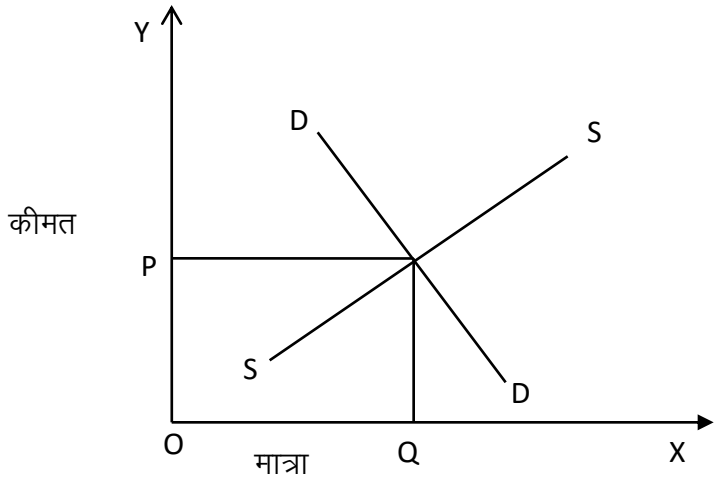

चित्र 1.3 में मांग व पूर्ति वक्र को दर्शाया गया है। DD मांग वक्र है व SS पूर्ति वक्र है। Eसंतुलन की अन्तिम अवस्था है जहाँ OQ मांग और पूर्ति की मात्रा है और OP कीमत है। E एक स्थैतिक संतुलन है जोकि यह दिखाता है कि बाजार में सभी समायोजक पहले ही हो चुके है। आर्थिक स्थैतिकी केवल अंतिम स्थिति पर ध्यान केंद्रित करता है, ना की प्रक्रिया पर।

तुलनात्मक स्थैतिकी

तुलनात्मक स्थैतिकी आर्थिक स्थैतिकी का एक विस्तार मात्र है। केन्ज की पुस्तक The General Theory के प्रकाशित होने के बाद उसकी और काफी ध्यान दिया गया है। तुलनात्मक स्थैतिक वर्तमान संतुलन और परिवर्तन होने के बाद जो संतुलन उत्पन्न होता है उनमें तुलनात्मक अध्ययन करता है। इसलिए उसको तुलनात्मक स्थैतिक कहा जाता है। तुलनात्मक स्थैतिकी अध्ययन भी समायोजनों का अध्ययन नहीं करता है। यह केवल सन्तुलनों को अध्ययन करता है। केन्ज का संतुलन विश्लेषण तुलनात्मक स्थैतिकी कहा जा सकता है। क्योंकि यह संतुलन की अंतिम अवस्था के बारे में बात करता है। केन्ज के विश्लेषण को तब प्रावैगिकी माना जाता यदि उसने इसमें आशंसाओं में लगातार परिवर्तनों को शामिल किया होता। कुल मिलाकर केन्ज के विश्लेषण को तुलनात्मक स्थैतिक माना जा सकता है, प्रावैगिकी बिल्कुल नहीं।

आर्थिक प्रावैगिकी

प्रावैगिकी शब्द भौतिकी विज्ञान से लिया गया है जहां पर इसका अर्थ गति में ईकाई होता है। प्रावैगिक संतुलन का विचार प्रावैगिकी अर्थव्यवस्था से संबंधित है। प्रावैगिकी अर्थव्यवस्था में आर्थिक तत्व स्थिर नहीं रहते है। उनमें लगातार परिवर्तन होता रहता है। अर्थव्यवस्था में परिवर्तन के साथ जब आर्थिक चरों में समान दर से परिवर्तन होता है तो उसे प्रावैगिकी संतुलन कहते है। प्रो. बोल्डिंग के अनुसार ''कालान्तर में कोई अर्थव्यवस्था उस समय प्रावैगिकी साम्य की स्थिति में होती है। जब उसके आवश्यक तत्वों में होने वाले परिवर्तनों की दरे समान बनी रहती है। हिक्स के प्रावैगिकी की व्याख्या करते हुए समय के तत्व को बहुत महत्व दिया है। स्थैतिकी और तुलनात्मक स्थैतिकी दोनों

में समय के तत्व की अपेक्षा की गई है। स्थैतिकी में संतुलन की अंतिम अवस्था पर ध्यान केन्द्रित किया गया है, जबकि सभी समायोजन हो चुके है। जबकि तुलनात्मक स्थैतिकी में आर्थिक प्रणाली किसी विशेष समय अवधि में एक संतुलन की अवस्था से दूसरी अवस्था तक छलांग लगा देती है। हिक्स के अनुसार, आर्थिक प्रावैगिकी का संबंध ''आर्थिक सिद्धांत के उन भागों के साथ है जिनमें हर मात्रा समय से संबंधित होती है।''

1.6.6 सीमांत

परम्परावादी आर्थिक सिद्धांत में आर्थिक निर्णय लेने के लिए सीमांत सिद्धांत का सबसे ज्यादा योगदान है। जैसे की गणनावाचक उपयोगिता विश्लेषण में एक वस्तु की दशा में उपभोक्ता को अधिकतम संतुष्टि तब प्राप्त होती है जब वस्तु से मिलने वाली सीमान्त उपयोगिता वस्तु की कीमत के बराबर हो

MUx=Px

दो वस्तुओं की स्थिति में संतुलन की शर्त

$$\frac{MUx}{Px} = \frac{MUy}{Py}$$

इसी तरह से क्रमवाचक उपयोगिता विश्लेषण में संतुलन की शर्त इस प्रकार होगी

$$\text{MRSxy} = \frac{Px}{Py}$$

क्रमवाचक उपयोगिता विश्लेषण में संतुलन जब होता है ,तब प्रतिस्थापन्न की सीमांत दर दो वस्तुएं X और Y की कीमतों के अनुपात के बराबर हो।

उत्पादक उत्पादन को अधिकतम करने अथवा लागतों को न्यूनतम करने वाले साधनों के संयोग के संबंध में निर्णय तक तब पहुंच सकता है, जब श्रम और पूंजी के बीच तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर श्रम की कीमत के पूंजी की कीमत के साथ अनुपात के समान हो जाती है।

$$\text{MRTSLK} = \frac{PL}{PK}$$

दो साधनों का इस प्रकार से निर्धारित संयोग जिसमें श्रम और पूंजी के सीमांत भौतिक उत्पाद सम्मिलित है, उत्पादक की दृष्टि में सबसे उचित होगा। एक फर्म को किसी वस्तु की कितनी मात्रा अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए पैदा करनी चाहिए यह भी सीमांत सिद्धांत के द्वारा निर्धारित होता है।

इस प्रकार आर्थिक एजेंटों के द्वारा सीमांत पर विचार सबसे अच्छे सम्भव चयन और उन चयनों में विनियम में सहायता करता है।

1.6.7 ढलान (Slope)

अर्थशास्त्र में परिवर्तन की दर का बहुत ज्यादा महत्व है। ढलान किसी एक चर में परिवर्तन की दर की गणना करता है। उदाहरण के रूप में हम यह गणना कर सकते है कि किसी वस्तु की कीमत में 1 रू कमी होने पर मांग कितनी बढ़ी। बढ़ने की यह दर अर्थशास्त्र में ढलान है। अर्थशास्त्र में ढलान रैखीय समीकरण व गैररेखीय समीकरण में प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के रूप में निम्न समीकरण को लिया जा सकता है।

y=f(x)=10+0.8x

$$\text{Slope} = \frac{dy}{dx} = 0.8$$

Slope = 0.8

इसी तरह से हम गैर रेखीय समीकरण को भी ले सकते है।

$y=f(x)=10+0.5x+0.8x^2$

Slope $=\frac{dy}{dx}$ = 0.5+1.6x

1.7 सारांश

व्यष्टि अर्थशास्त्र की इस ईकाई में हमने अर्थशास्त्र में प्रयुक्त होने वाली विभिन्न अवधारणाओं का अध्ययन किया है। किसी भी विषय को समझने व सीखने के लिए उस विषय की अवधारणाओं को समझना आवश्यक होता है। उन अवधारणाओं का सीखकर ही हम इस विषय को सीखते है। इस ईकाई के प्रथम भाग में हम अर्थशास्त्र की प्रकृति व क्षेत्र के बारे में सीखा है। अर्थशास्त्र की प्रकृति से अभिप्रायः अर्थशास्त्र कला है या विज्ञान है के बारे में सीखा है। विज्ञान में हम नियमों को बनाना सीखते है या नियम बनाये जाते है। जबकि कला में नियमों का प्रयोग करना सीखते है।

नियमों का प्रयोग करके आर्थिक समस्याओं का समाधान करते हैं। वास्तविक अर्थशास्त्र में क्या है, क्या था, और क्या होगा का अध्ययन किया जाता है। जबकि आदर्शात्मक अर्थशास्त्र में हम 'क्या होना चाहिए' का अध्ययन करते है। वास्तविक अर्थशास्त्र में समस्याओं का पता करते है, जबकि आदर्शात्मक अर्थशास्त्र में समस्याओं का समाधान करना सीखते है। इससे आगे हमने मान्यताओं की भूमिका के बारे में पढा है। आर्थिक विश्लेषण जटिल होते है। मान्यताएं आर्थिक विश्लेषण को जटिल से आसान बना देती है। चक्रिय प्रवाह में हमने पढ़ा की आय व वस्तुओं और सेवाओं का अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में प्रवाह होता रहता है। जिसको आय का चक्रिय प्रवाह कहते है। संतुलन विश्राम की स्थिति है जिसमें परिवर्तन की दर स्थिर बनी रहती है। संतुलन में हमने आंशिक और सामान्य संतुलन स्थैतिक तुलनात्मक और गतिशील का प्रावैगिक संतुलन के बारे में पढ़ा है। सीमांत विश्लेषण का अर्थशास्त्र में बहुत बड़ा योगदान है। व्यष्टि अर्थशास्त्र में उपभोक्ता, उत्पादक, वस्तु बाजार व साधन बाजार का विश्लेषण हम सीमांत विश्लेषण में ही करते है। किसी भी तालिका या समीकरण का ढलान निकालकर हम सीमांत विश्लेषण करते है। इस ईकाई का अध्ययन अन्य ईकाइयों के अध्ययन को आसान बना देगी।

1.8 मुख्य शब्दावली

- **अर्थशास्त्र–** अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है जो इस बात का अध्ययन कराता है कि समाज किस प्रकार अपने वैकल्पिक प्रयोग वाले सीमित संसाधनों का वस्तुओं व सेवाओं के उत्पादन के लिए प्रयोग करती है और उन्हें विभिन्न वर्गों के व्यक्तियों के बीच बांटती है।
- **व्यष्टि अर्थशास्त्र–** व्यष्टि अर्थशास्त्र आर्थिक निर्णय लेने वाली व्यक्तिगत ईकाइयों का अध्ययन किया जाता है।
- **समृष्टि अर्थशास्त्र –** समष्टि अर्थशास्त्र में संपूर्ण अर्थव्यवस्था के समग्रों के व्यवहार का अध्ययन किया जाता है।
- **अर्थव्यवस्था–** अर्थव्यवस्था एक ऐसी प्रणाली है जिसमें लोगों को जीविका अर्जित करने और कार्य करने के साधन प्रदान कराती है।
- **दूर्लभता –** दूर्लभता वह स्थिति है जिसमें किसी वस्तु या सेवा की मांग उसकी पूर्ति से ज्यादा होती है।
- **वास्तविक अर्थशास्त्र –** यह अर्थशास्त्र बताता है कि आर्थिक समस्या क्या है, क्या थी या क्या होगी।
- **आदर्शात्मक अर्थशास्त्र –** यह अर्थशास्त्र बताता है कि आर्थिक समस्याएँ किस प्रकार हल की जानी चाहिए।
- **आंशिक संतुलन –** आंशिक संतुलन में अन्य बातों को स्थिर मानते हुए संतुलन की व्याख्या की जाती है।

- **सामान्य संतुलन –** सामान्य संतुलन में अन्य बातों में परिवर्तन होते हुए, संतुलन की व्याख्या की जाती है।

1.9 अपनी प्रगति जानिए के प्रश्न

1. अर्थशास्त्र की प्रकृति से अभिप्रायः ज्ञान का वह ..... और ..... अध्ययन है जो कारण और प्रभाव के संबंध की व्याख्या करता है।
2. अर्थशास्त्र के दो भाग है ..... अर्थशास्त्र और ..... अर्थशास्त्र।
3. अर्थशास्त्र के पिता ..... थे।
4. डॉ मार्शल की पुस्तक का नाम ..... था।
5. एडम स्मिथ ने ..... संबंधी परिभाषा दी थी।
6. रॉबिन्स ने ..... संबंधी परिभाषा दी थी।
7. व्यष्टि अर्थशास्त्र का ..... अध्ययन कल्याणकारी अर्थशास्त्र है।
8. उत्पादन के ..... साधन है।
9. संतुलन एक ..... की अवस्था है परन्तु उसको ..... की अवस्था नहीं कहा जा सकता।
10. आदा–प्रदा विश्लेषण का प्रतिपादन ..... ने किया था।

1.10 अपनी प्रगति जानिए के उत्तर

1. क्रम बद्ध, सम्पूर्ण
2. व्यष्टि, समष्टि
3. एडम स्मिथ
4. Principle of Economics
5. धन
6. दूर्लभता
7. नीतिगत
8. चार
9. विश्राम, गतिहीनता
10. डब्ल्यू लियोनटीफ

1.11 अभ्यास हेतु प्रश्न

लघु उतरीय प्रश्न

1. आदर्शात्मक अर्थशास्त्र की कोई एक समस्या लिखिए।
2. उत्पादन के कितने साधन है।
3. फर्म, गर्हस्थ क्षेत्र से किस प्रकार भिन्न है।

4. आर्थिक समस्या क्यों उत्पन्न होती है समझाइये।
5. ढलान क्या है।
6. मार्शल और रॉबिन्स द्वारा दी गई अर्थ शास्त्र की परिभाषा में अन्तर बताइए।
7. अर्थशास्त्र विज्ञान और कला दोनो ही है–व्याख्या करे।
8. मार्शल की अर्थशास्त्र की परिभाषा लिखिए।

दीर्घ उतरीय प्रश्न

1. ढलान का आर्थिक विश्लेषण में महत्व बताए।
2. स्थैतिक, तुलनात्मक स्थैतिक और प्रावैगिक विश्लेषण में उदाहरण के साथ अन्तर स्पष्ट करे।
3. सामान्य संतुलन और आंगिक संतुलन में अन्तर स्पष्ट करे।
4. व्यष्टि अर्थशास्त्र की प्रकृति व क्षेत्र के बारे में पूरी व्याख्या करे।
5. वास्तविक और कल्याणकारी अर्थशास्त्र में उदाहरण के साथ अन्तर स्पष्ट करे।

1.12 आप ये भी पढ़ सकते हैं एवम् संदर्भ सूची

- Ahuja, H.L. (2016). Advance Economic Theory (6th edition), New Delhi : S. Chand & Company Pvt. Ltd. Hindi Medium
- Jhingan, M.L. (2004), Micro Economics (2nd edition), New Delhi : Vrinda Publication Pvt. Ltd. (Hindi Medium)
- Singh, S.P. (2013). Micro Economics (2nd edition), New Delhi : S Chand & Company Pvt. Ltd., Hindi Medium
- Verma, K.N. (2014). Micro Economic Theory (2nd edition), Jalandhar, Punjab : Vishal Publishing Co., Hindi Medium.
- Dwivedi, D.N. (2006). Microeconomics Theory & Application (1st Edition). New Delhi : Pearson Education in SouthAsia.
- Koutsoyiannis,A. (1975). Modern Micro economics (2nd edition) London : Macmillan Publishers Ltd.

इकाई – 2

उपभोक्ता का संतुलन

इकाई की रूपरेखा

2.0 परिचय

2.1 इकाई के उद्देश्य

2.2 माँग

- 2.2.1 माँग फलन
- 2.2.2 माँग का नियम
- 2.2.3 उपयोगिता का गणनावाचक सिद्धान्त
- 2.2.4 उपयोगिता का क्रमवाचक सिद्धान्त
- 2.2.5 उपयोगिता का प्रकट अधिमान सिद्धान्त

2.3 आय उपयोग वक्र

2.4 ऐंजल वक्र

2.5 वस्तुओं के प्रकार

- 2.5.1 प्रतिस्थापक वस्तुएं
- 2.5.2 पूरक वस्तुएं

2.6 बाजार माँग वक्र

2.7 बाहुयताओं के प्रभाव के परिणाम

- 2.7.1 बैंडवेगन प्रभाव के परिणाम
- 2.7.2 स्नोब प्रभाव के परिणाम
- 2.7.3 वेबलेन प्रभाव के परिणाम

2.8 उपभोक्ता बचत

2.9 सारांश

2.10 मुख्य शब्दावली

2.11 अपनी प्रगति जनिए के प्रश्न

2.12 अपनी प्रगति जानिए के उत्तर

2.13 अभ्यास हेतु प्रश्न

2.14 आप ये भी पढ़ सकते हैं

2.0 परिचय

एक उपभोक्ता का निर्णय उत्पादक के लिए बड़ा महत्वपूर्ण होता है। एक उपभोक्ता उपभोग ढ़ांचे का मुख्य निर्णयकर्ता होता हैं। उपभोक्ता वह होता हैं जो अपनी आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए वस्तुओं और सेवाओं का प्रयोग करता हैं। एक उपभोक्ता का उद्देश्य दी हुई आय से अपनी संतुष्टि को अधिकतम करने का होता हैं। एक उपभोक्ता अपनी आय से संतुष्टि को अधिकतम करता हैं। इस इकाई का उद्देश्य यह है कि उपभोक्ता दी गई आय से अपनी संतुष्टि को अधिकतम कैसे करें। उपभोक्ता का एक दिये गये बाजार में व्यवहार मूल रूप में उनके

द्वारा खरीदी गई वस्तुओं और सेवाओं की मात्राओं से सम्बधित हैं। उपभोक्ता के व्यवहार का अध्ययन करने के लिए सबसे पुराना सिद्धांत गणनावाचक उपयोगिता विश्लेषण हैं गणनावाचक उपयोगिता विश्लेषण की कमियों को देखते हुऐ आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने क्रमवाचक उपयोगिता विश्लेषण व अधिमान उपयोगिता विश्लेषण का विकास किया है।

2.1 इकाई के उद्देश्य :

इस इकाई के निम्न उद्देश्य हैः

- उपयोगिता के गणनावाचक सिद्धांत का विश्लेषण करना
- उपयोगिता के क्रमवाचक सिद्धांत का विश्लेषण करना
- उपयोगिता के प्रकट अधिमान सिद्धांत का विश्लेषण करना
- बाह्यताओं के प्रभाव का अध्ययन करना
- उपभोक्ता बचत का अध्ययन करना
- वस्तुओं के प्रकार में अन्तर स्थापित करना

2.2 मांग

वस्तुओं की मांग इसलिए की जाती हैं, क्योंकि उनमें आवश्यकताओं को संतुष्ट करने की क्षमता होती हैं। हम कई बार वस्तु की मांग को इच्छा के अर्थ में समझते हैं। कई बार हम आवश्यकता को मांग समझ लेते हैं। परन्तु एक उपभोक्ता की प्रत्येक आवश्यकता या इच्छा मांग नही कहलाती हैं यदि एक व्यक्ति की इच्छा मंहगी गाड़ी खरीदने की है तो इसका अर्थ यह नही है की उसकी मंहगी गाडी की मांग हैं। जब तक एक व्यक्ति की किसी वस्तु को खरीदने का सामर्थ्य नही हैं और वह उस पर धन खर्च करने को तैयार नही है, तो यह नही माना जा सकता हैं कि वह वस्तु की मांग करता हैं। अर्थशास्त्री पैन्सन ने इसे प्रभावी मांग बताया हैं। मांग को तब विद्यमान माना जा सकता हैं जब एक व्यक्ति की खरीदने की इच्छा, खरीदने का सामर्थ्य और उसकी दी गई वस्तु और सेवा पर मुद्रा खर्च करने की इच्छा पाई जाती हैं। जे0 एस0 मिल के अनुसार ''मांग एक वस्तु की एक विशेष समय और एक विशेष कीमत पर खरीदी गई मात्रा है''बैन्हम के अनुसार, '' एक दी गई कीमत पर किसी वस्तु के लिए मांग इसकी वह मात्रा हे जो समय की प्रति इकाई में उस कीमत पर खरीदी जायेगी ''।

2.2.1 मांग फलन

मांग फलन एक विशेष वस्तु की मांगी जाने वाली मात्रा और उसे प्रभावित करने वाले कारको के बीच के संबंध को दर्शाता हैं। मांग फलन के दो प्रकार है व्यक्तिगत मांगफलन और बाजार मांग फलन। व्यक्तिगत मांग फलन एक उपभोक्ता के सन्दर्भ में प्रयुक्त है और बाजार मांग फलन सभी उपभोक्ताओ के सदंर्भ में प्रयुक्त होता हैं।

व्यक्तिगत मांग फलन

व्यक्तिगत मांग फलन व्यक्तिगत मांग और व्यक्तिगत मांग को प्रभावित करने वाले कारकों के बीच सम्बन्ध दर्शाता हैं।

DA = f(PA, Pr, Y, T, F)
DA = वस्तु। की मांग
PA = वस्तु। की कीमत
Pr = सम्बन्धित वस्तुओ की कीमत
Y = उपभोक्ता की आय

T = अभिरूचिया और प्राथमिकताएं
F = भविष्य में कीमत परिवर्तन की समभावना

उपरोक्त मांग फलन में दायीं तरफ मांग को प्रभावित करने वाले सभी कारक हैं और बायीं तरफ वस्तु की मांग हैं।

बाजार मांग फलन

बाजार मांग फलन बाजार मांग और बाजार मांग को प्रभावित करने वाले कारकों के बीच फलनात्मक संबंध को दर्शाता हैं। बाजार मांग सभी उपभोक्ताओं की मांग का जोड़ हैं। इसलिए बाजार मांग में व्यक्तिगत मांग को प्रभावित करने वाले कारकों के साथ जनसंख्या के आकार और संरचना, मौसम और जलवायु और आय के वितरण को भी शामिल किया जाता हैं। बाजार मांग फलन को निम्न प्रकार से लिखा जा सकता हैं।

DA = f(PA, Pr, Y, T, F, Po, S,D)
DA = वस्तु। की मांग
PA = वस्तु। की कीमत
Pr = सम्बन्धित वस्तुओ की कीमत
Y = उपभोक्ता की आय
T = अभिरूचिया और प्राथमिकताएं
F = भविष्य में कीमत परिवर्तन की समभावना
Po = जनसंख्या का आकार और संरचना
S = मौसम और जलवायु
D = आय का वितरण

2.2.2 मांग का नियम

मांग का नियम अर्थशास्त्र के प्रमुख नियमों में से एक हैं। हमारे दैनिक जीवन में यह देखा जा सकता है कि कीमत में कमी मांग को बढ़ा देती हैं और कीमत में वृद्धि मांग को कम कर देती हैं। यह प्रकृति मांग के नियम का निर्माण करती हैं। मांग का नियम वस्तु की मांग और कीमत में फलनीय सम्बन्ध को प्रकट करता हैं।

मांग का नियम बताता हैं कि यदि अन्य बातें समान रहे तो कीमत घटने पर मांग बढ़ती हैं और कीमत बढने पर मांग घटती है। अन्य बातों का अर्थ यहां पर कीमत को छोड़कर व्यक्तिगत और बाजार मांग को प्रभावित करने वाले कारक आते हैं। सैम्युलसन के अनुसार, यदि अन्य बाते समान रहें तो कम कीमतों पर लोग अधिक मात्रा और उंची कीमतों पर कम मात्रा खरीदेंगे। मांग का नियम कीमत और माँग में ऋणात्मक संबंध को दर्शाता हैं। माँग के नियम को माँग तालिका और माँग वक्र की सहायता से समझा जा सकता हैं।

मांग तालिका

तालिका – 2.1

कीमत (रूपये में)	मांगी गई मात्रा (इकाईयाँ)
50	10
40	20
30	30
20	40
10	50

माँग तालिका कीमत और माँगी गई मात्रा में ऋणात्मक सम्बन्ध को दर्शाती हैं। तालिका –2.1 से स्पष्ट हैं कि कीमत और माँगी गई मात्रा के ऋणात्मक संबंध हैं जब कीमत 50रूपये से घटकर 10रूपये हो जाती हैं तो उसके परिणामरूवरूप मांगी गई मात्रा 10 इकाई से बढ़कर 50 इकाई हो जाती हैं।

मांग वक्र

चित्र – 2.1

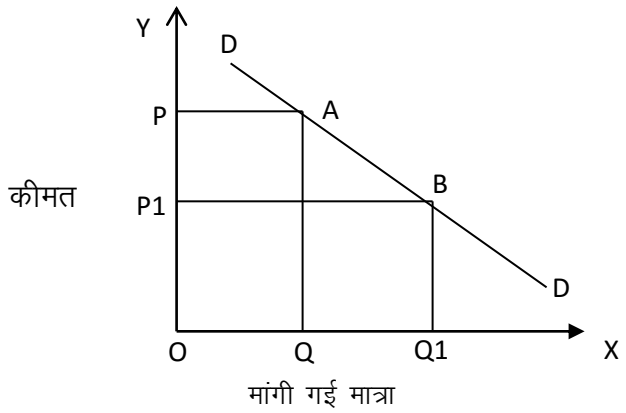

माँग वक्र माँग तालिका का ग्राफीय प्रस्तुतीकरण हैं। मांग वक्र किसी वस्तु की कीमत और मांगी गई मात्रा के ऋणात्मक संबंध को दर्शाता हैं। DD माँग वक्र है। DD माँग वक्र दर्शा रहा हैं की जब कीमत OP से कम होकर OP_1हो जाती हैं तो माँग OQ से बढ़कर OQ_1 हो जाती हैं।

माँग वक्र पर चलन (माँग का विस्तार व संकूचन)

मांग वक्र के चलन से अभिप्रायः कीमत के परिवर्तन होने पर और अन्य बातों के स्थिर रहने पर माँग में होने वाला परिवर्तन हैं। माँग वक्र में चलन को माँग में विस्तार और माँग में सकुंचन के रूप में समझा जा सकता हैं।

मांग का विस्तार

चित्र – 2.2

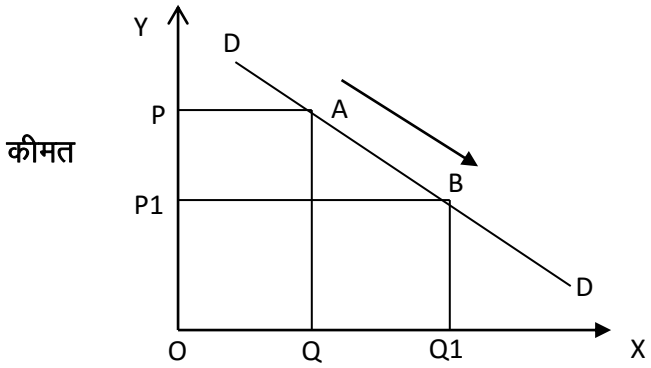

मांगी गई मात्रा

चित्र–2.2 दर्शा रहा है कि अन्य बातों के स्थिर रहने पर जब कीमत कम होकर OP से OP_1 हो जाती हैं तो माँगी गई मात्रा OQ से बढ़कर OQ1 हो जाती हैं। माँग का विस्तार हैं।

माँग का सकूचन

चित्र 2.3

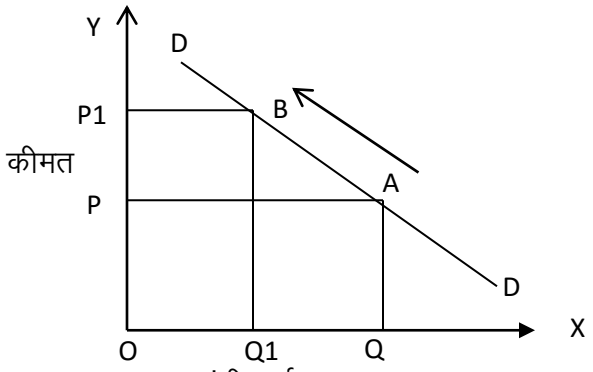

चित्र 2.3 दर्शा रहा है कि अन्य बातों के स्थिर रहने पर कीमत बढ़कर OP से OP_1 हो जाती है तो माँगी गई मात्रा OQ से घटाकर OQ_1 हो जाती है। QQ_1माँग का सकूचन है।

माँग में परिवर्तन (माँग में वृद्धि और माँग में कमी)

माँग में परिवर्तन से अभिप्राय वस्तु की स्वयम् की कीमत में परिवर्तन के अतिरिक्त अन्य बातों में परिवर्तन के कारण वस्तु की माँग में होने वाले परिवर्तन से हैं। माँग में परिवर्तन माँग में वृद्धि और माँग में कमी के रूप में हो सकता है।

माँग में वृद्धि

कीमत के स्थिर रहने पर और अन्य बातों में परिवर्तन होने के कारण माँग का बढ़ना माँग में वृद्धि कहलाता है। उदाहरण के लिए जब उपभोक्ता की आय बढ़ जाती है तो सामान्य वस्तु की माँग बढ़ जाती है। इसको तालिका व चित्र की सहायता से समझा जा सकता है।

तालिका – 2.2

मांग में वृद्धि

कीमत (रूपये में)	मांग (इकाईया)
30	60
30	80

चित्र – 2.4

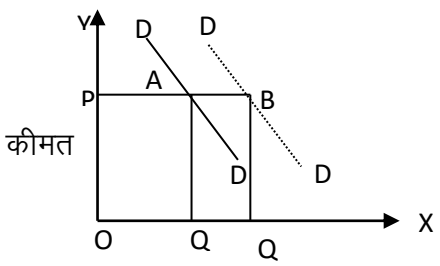

तालिका 2.2 से स्पष्ट है कि कीमत के 30 रुपये रहने पर और अन्य बातों में परिवर्तन होने पर माँग 60 इकाइयों से बढ़कर 80 ईकाइयाँ हो जाती है। उसे माँग में वृद्धि कहते है। इसको चित्र की सहायता से समझा जा सकता है।

चित्र 2.4 में कीमत OP ही रहती है परन्तु माँग OQ से बढ़कर OQ_1 हो जाती है और मांग वक्र खिसक कर DD से D_1D_1 हो जाता है।

माँग में कमी

कीमत के स्थिर रहने पर और अन्य बातों में परिवर्तन से माँग का घटना माँग में कमी कहलाता है। उदाहरण के लिए उपभोक्ता की आय में कमी होने पर सामान्य वस्तुओं की माँग में कमी हो जाती है। उसको तालिका व रेखाचित की सहायता से समझा जा सकता है।

तालिका – 2.3

मांग में कमी

कीमत (रूपये में)	मांग (इकाईया)
30	60
30	40

चित्र – 2.5

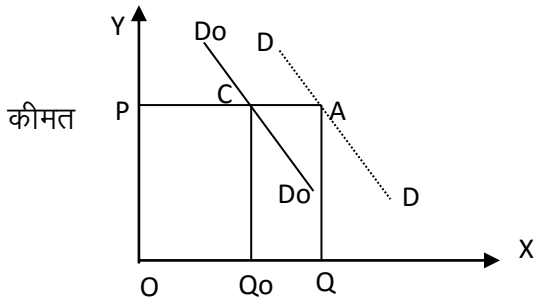

तालिका 2.3 से स्पष्ट है कि कीमत के 30 रुपये रहने पर और अन्य बातों में परिवर्तन होने पर माँग 60 ईकाइयोंसे घटकर 40 ईकाईयां हो जाती हैं उसे माँग में कमी कहते हैं। उसको चित्र की सहायता से समझा जा सकता हैं।

चित्र 2.5 में कीमत OP ही रहती है परन्तु माँग OQ से घटकर OQo हो जाती है और माँग वक्र खिसक कर DD से D_0D_0 हो जाता है।

सामान्य वस्तुएं और घटिया वस्तुएं

सामान्य वस्तुएं (Normal Goods)

सामान्य वस्तुए वे होती हैं जिनकी उपभोक्ता की आय बढ़ने पर उनकी माँग बढ़ जाती हैं। और उनकों अधिक खरीदा जाता हैं। अर्थात जिन वस्तुओं का आय के साथ धनात्मक संबंध होता हैं, उनको सामान्य वस्तुएं कहते हैं। उदाहरण के लिए, आय बढने से यदि कार की माँग बढ जाती हैं तब कार एक सामान्य वस्तु होगी। सामान्य वस्तुओं की स्थिति में आय का प्रभाव धनात्मक होता हैं।

चित्र – 2.6

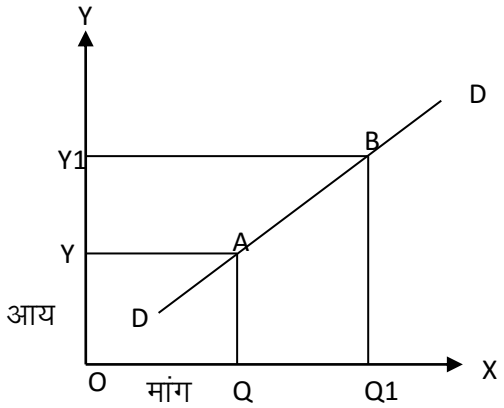

चित्र – 2.6 में जब उपभोक्ता की आय OYसे बढकर OY1 हो जाती है तो वस्तु की मांग बढकर OQ से OQ1 हो जाती है।

घटिया वस्तुए (Inferior Goods)

घटिया वस्तुएं वो वस्तुएं होती हैं जिनकी माँग आय बढने के साथ घटती हैं। और जिनकी माँग आय घटने के साथ बढती हैं। घटिया वस्तुओं में माँग और आय में ऋणात्मक संबंध होता हैं। घटिया वस्तुओं की स्थिति में आय प्रभाव ऋणात्मक होता हैं उदाहरण के लिए जब उपभोक्ता की आय बढ़ जाती हैं और किसी सब्जी की माँग कम हो जाएं तो वह सब्जी घटिया वस्तु होगी।

चित्र 2.7 – घटिया वस्तु

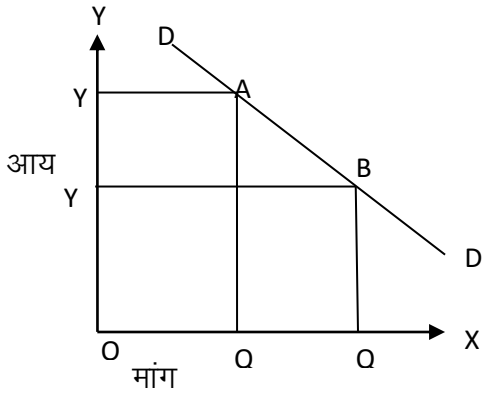

उपरोक्त चित्र घटिया वस्तुओ की मांग को प्रकट करता है जब उपभोक्ता की आय OY से कम होकर OY1 हो जाती है तो उपभोक्ता की मांग OQ से बढकर OQ1 हो जाती है।

2.2.3 उपयोगिता का गणनावाचक सिंद्धात

उपभोक्ता के व्यवहार की व्याख्या करने के लिए क्लासिकल अर्थशासत्रियों एडम स्मिथ, डयुपिट, गौसेन, जेवन्स, वालरस और जे. एस. मिल जैसे अर्थशास्त्रियों का अहम् योगदान हैं। परन्तु मार्शल और पीगू जैसे नव क्लासिकल अर्थशासत्रियों ने क्रमबद्ध ढ़ंग से विकसित किया।गणनात्मक उपयोगिता विश्लेषण के अर्थशासत्रियों ने उपयोगिता को गणनावाचक धारणा माना हैं उनके अनुसार उपयोगिता का माप संभव हैं इसको संख्याओं के रूप में मापा जा

सकता हैं। कोई उपभोक्ता कह सकता है कि किसी विशेष पुस्तक को पढने से 10 इकाईयां उपयोगिता प्राप्त हुई हैं।

उपयोगिता विश्लेषण की मान्यताएं

उपयोगिता विश्लेषण निम्नलिखित मान्यताओं पर आधारित हैं।

1. उपयोगिता का मापन संख्या के रूप में होता हैं। उपयोगिता का लंबाई, चौड़ाई, भार आदि की तरह मापन हो सकता हैं।
2. उपयोगिता का संख्यावाचक माप मुद्रा की सहायता से किया जाता हैं।
3. मुद्रा की सीमान्त उपयोगिता स्थिर होती हैं
4. गणनावाचक उपयोगिता विश्लेषण में उपभोक्ता को विवेकशील माना गया हैं। विवेकशील उपभोक्ता वह होता हैं जो दी गई आय और वस्तुओं की कीमतों पर अपनी संतुष्टि को अधिकतम करता हैं।
5. उपयोगिता की स्वतन्त्रता होती हैं। उसका अर्थ हैं कि दी गई वस्तु की उपयोगिता केवल उसकी मात्रा पर निर्भर करती हैं। अर्थात प्रतिस्थापक और पूरक वस्तुओं के उपभोग का दी गई वस्तु की उपयोगिता पर कोई प्रभाव नही पड़ता हैं। इस कारण ही उपयोगिता फलन योगात्मक बन जाता हैं। कुल उपयोगिता को प्राप्त करने के लिए सीमान्त उपयोगिता को जोड़ा जा सकता हैं।

6 उपभोक्ता को पूर्ण ज्ञान होता हैं। उपभोक्ता को वस्तुओं की उपलब्धता और उनकी गुणवताओं के बारे में पूर्ण ज्ञान होता हैं।

7 उपभोक्ताओं को सभी वस्तुओं की कीमत का पूर्ण ज्ञान होता हैं।

8 सीमान्त उपयोगिता घटती रहती हैं इसका अर्थ है की वस्तु की एक अतिरिक्त ईकाई का उपभोग करने पर सीमान्त उपयोगिता अर्थात अतिरिक्त ईकाई से मिली उपयोगिता घटती रहती हैं।

9 गणनात्मक उपयोगिता योगात्मक हैं। उसका अर्थ है कि वस्तु की विभिन्न ईकाईयों से प्राप्त उपयोगिता को जोड़ा या घटाया जा सकता हैं।

कुल उपयोगिता और सीमान्त उपयोगिता

गणनावाचक उपयोगिता विश्लेषण की दो मूल धारणायें हैं मुल उपयोगिता और सीमान्त उपयोगिता।

उपयोगिता से अभिप्राय किसी वस्तु की आवश्यकता को संतुष्ट करने की षक्ति से होता हैं। उपयोगिता का अर्थ है किसी वस्तु का उपभोग करने से प्राप्त संतुष्टि। प्रो हॉबसन के शब्दों में उपयोगिता का अर्थ एक वस्तु की आवश्यकता को संतुष्ट करने की योग्यता से हैं।

उपयोगिता का अर्थ जानने के बाद अगला महत्वपूर्ण प्रश्न उपयोगिता के मापन से संबंधित हैं। उपयोगिता के गणनात्मक माप के द्वारा एक व्यक्ति को वस्तुओं की सेवाओं के उपभोग से मिलने वाली उपयोगिता को संख्यात्मक रूप में मापना संभव हो जाता हैं। परन्तु उपयोगिता को मापने की कोई प्रमाणिक ईकाई नही थी। अतः अर्थशास्त्रियों ने एक काल्पनिक माप दी जिसे यूटिल कहा गया।

यूटिल उपयोगिता को मापने की केवल एक काल्पनिक और मनोवैज्ञानिक इकाई हैं। माना कि अभी आपने एक सेब और संतरा खाया हैं आप एक सेब खाने से प्राप्त उपयोगिता को 30 यूटिल देना चाहते है। अब आप एक संतरा से प्राप्त उपयोगिता को कितना यूटिल देना चाहोगे। यह आपकी पंसद पर निर्भर करेगा। अगर आप संतरा को सेब से

ज्यादा पसंद करते हो तो संतरे से मिलने वाली उपयोगिता 30 यूटिल से ज्यादा होगी। अगर आपको कम पसंद है तो आप संतरे को 30 यूटिल से कम यूटिल देना पंसद करोगे।

कुल उपयोगिता

कुल उपयोगिता से अभिप्रायः एक वस्तु की सभी इकाईयों का उपभोग करने से प्राप्त होने वाली कुल संतुष्टि से होता हैं। यह सभी ईकाईयों का उपभोग करने में प्राप्त कुल संतुष्टि को मापती हैं। मान लो आप 10 संतरे का उपभोग करते हो। 10 संतरों से प्राप्त उपयोगिता को हम कुल उपयोगिता कहेंगें। कुल उपयोगिता एक दी गई वस्तु की खरीदी गई मात्रा का प्रत्यक्ष फलन हैं। जितना उपभोग बढ़ता हैं कुल उपयोगिता भी बढती है। जितना उपभोग कम करोगे उतनी ही उपयोगिता कम होगी।

TUx = f(Qx)

TUx = वस्तु x की कुल उपयोगिता

f = फलन

Qx = वस्तु x की इकाईया

n इकाईयों की कुल उपयोगिता इस प्रकार होगी।

TU=U1+U2+U3+ ---------- Un

सीमान्त उपयोगिता

सीमान्त उपयोगिता दी गयी वस्तु की एक अतिरिक्त इकाई का उपभोग करने से प्राप्त होने वाली अतिरिक्त उपयोगिता होती हैं। अंतिम ईकाई से प्राप्त होने वाली उपयोगिता को सीमान्त उपयोगिता कहते हैं।

उदाहरण के लिए जब हम 10 सेब का प्रयोग कर रहे हैं तो कुल उपयोगिता 50 यूटिल मिल रही हैं। अब हम सेब की मात्रा बढ़ाकर 10 से 11 सेब कर देते हैं तो कुल उपयोगिता 50 यूटिल से बढकर 60 यूटिल हो जाती है। उपरोक्त उदाहरण से स्पष्ट है कि जब अतिरिक्त इकाई का उपभोग किया जाता हैं तो कुल उपयोगिता 50 से बढकर 60 हो जाती हैं। तो यह बढी हुई 10 यूटिल उपयोगिता यहाँ सीमान्त उपयोगिता होगी। चैपमैन के शब्दों में सीमान्त उपयोगिता एक वस्तु की एक अतिरिक्त इकाई का उपभोग करने से कुल उपयोगिता में होने वाली वृद्धि हैं।

सीमान्त उपयोगिता को निम्नलिखित ढ़ग से लिखा जा सकता हैं।

MUn = TUn-TUn-1

MUn = n वीं ईकाई से प्राप्त सीमान्त उपयोगिता

TUn = n इकाईयों की कुल उपयोगिता

TUn-1 = n-1 इकाईयों की कुल उपयोगिता

यदि 10 सेबों से 50 युटिल उपयोगिता मिल रही हैं और 11 सेबों से 6 यूटिल उपयोगिता मिल रही है तो 11 वे सेब से 10 यूटिल उपयोगिता मिलेगी और यह सीमान्त उपयोगिता होगी।

MUn=TUn-TUn-1 =60-50=10 यूटिल

सीमान्त उपयोगिता की गणना का एक दूसरा भी तरीका हैं सामान्यता यह हम उस समय प्रयोग करते हैं जब परिवर्तन एक ईकाई का न होकर एक से अधिक ईकाईयों का होता हैं।

MU=$\frac{\Delta TU}{\Delta Q}$

ΔTU =कुल उपयोगिता में परिवर्तन

ΔQ= वस्तु की मात्रा में परिवर्तन

उदाहरण के लिए जब 10 सेबों से 50 यूटिल उपयोगिता मिल रही हैं तो हम 2 सेबों को और जोड़ देते हैं और कुल उपभोग योग्य सेब 12 हो जाते हैं। कुल उपयोगिता 50 युटिल से बढकर 68 यूटिल हो जाती हैं इस केस में सीमान्त उपयोगिता 18 यूटिल नही होगी। क्योंकि वस्तु की मात्रा का परिवर्तन 1 ईकाई का नही हैं इस केस में उपरोक्त फॉर्मूले का प्रयोग करेगें।

MU = $\frac{\Delta TU}{\Delta Q} = \frac{68-50}{12-10} = \frac{18}{2}$=9

MU = 9 युटिल

कुल उपयोगिता और सीमान्त उपयोगिता में संबंध

कुल उपयोगिता सभी ईकाईयों से प्राप्त सीमान्त उपयोगिताओं के जोड़ से प्राप्त की जाती हैं।

TUn=MU1+MU2+ ---------- MUn

TU=ΣMU

कुल उपयोगिता और सीमान्त उपयोगिता के संबंध को तालिका की सहायता से समझा जा सकता हैं।

तालिका– 2.4

कुल उपयोगिता (TU) और सीमांत उपयोगिता (MU)

उपभोग की मात्रा (Q)	कुल उपयोगिता (TU)	सीमान्त उपयोगिता (MU)
1	20	–
2	36	16
3	48	12
4	56	8
5	60	4
6	60	0
7	56	–4

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि कुल उपयोगिता संतुष्टि का जोड़ हैं जैसे 7 इकाई से प्राप्त उपयोगिता सभी सातों इकाईयों की संतुष्टि का जोड़ हैं और सीमान्त उपयोगिता कुल उपयोगिता में अतिरिक्त इकाई का उपभोग करने से होने वाला परिवर्तन हैं उपरोक्त तालिका से स्पष्ट हैं कि जब दूसरी इकाई का उपभोग करते हैं तो कुल उपयोगिता 20 से बढकर 36 यूटिल हो जाती हैं। यह 16 यूटिल का परिवर्तन सीमान्त उपयोगिता है। इसी तरह 7वीं इकाई से प्राप्त सीमान्त उपयोगिता 4 यूटिल हैं क्योकि कुल उपयोगिता 60 से घटकर 56 युटिल हो जाती हैं

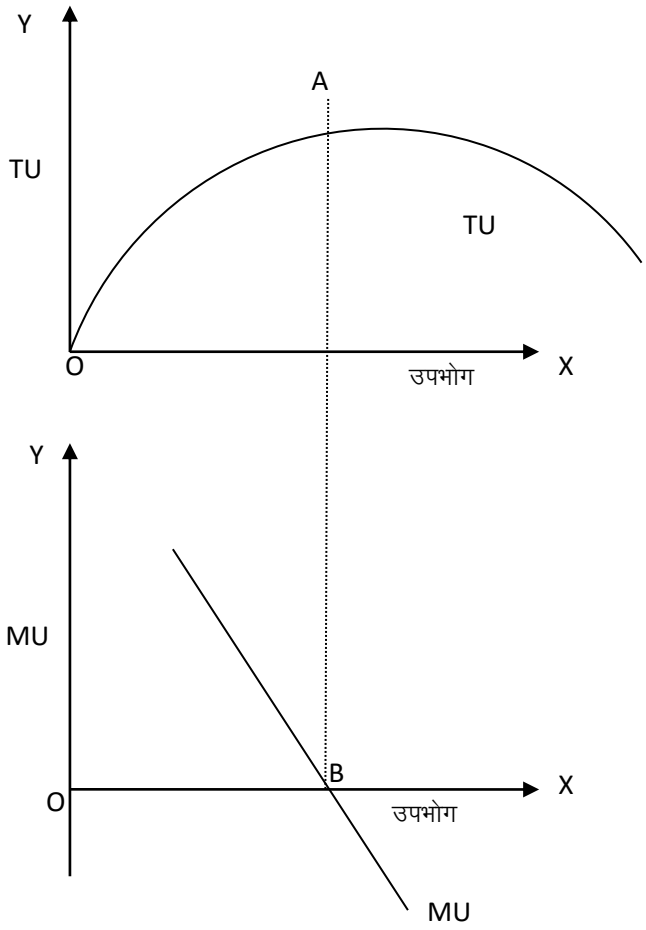

उपरोक्त चित्र 2.8 में कुल उपयोगिता और सीमान्त उपयोगिता में संबंध को बता रहा हैं। X-axis पर उपभोग की मात्रा हैं। Y-axis पर कुल उपयोगिता (TU) पर और सीमान्त उपयोगिता (MU) है।। बिन्दु तक कुल उपयोगिता बढती हैं।। बिंदु के बाद उपयोगिता कम होती रहती हैं। इसी तरह सीमान्त उपयोगिता कम होती रहती है और बाद में ऋणात्मक होकर घटने लगती हैं। B बिन्दु पर सीमान्त उपयोगिता शुन्य हो जाती हैं। कुल उपयोगिता और सीमान्त उपयोगिता में निम्नलिखित संबंध हैं।

1. जब तक MU घटती हैं लेकिन धनात्मक होती हैं तो TU बढती रहती हैं
2 जब MU घटकर शुन्य हो जाती हैं तो TU अधिकतम हो जाती हैं। इसे अधिकतम संतुष्टि का बिन्दु भी कहते हैं।
3 जब MU घटकर ऋणात्मक हो जाती हैं तो TU घटने लगती हैं।

घटती सीमान्त उपयोगिता का नियम

घटती सीमान्त उपयोगिता नियम के अनुसार किसी वस्तु की उपभोग की ईकाईयां बढाते हैं तो उनसे मिलने वाली सीमान्त उपयोगिता कम होती रहती हैं। क्योंकि मानव की आवश्यकताओं की तीव्रता सीमित होती हैं। सबसे पहले इस नियम को जर्मन अर्थशास्त्री गौसेन ने प्रस्तुत किया था। इसी कारण इसे 'गौसेन का प्रथम नियम' कहते हैं।

घटती सीमान्त उपयोगिता की व्याख्या तालिका – 2.4 और चित्र 2.8 करता हैं। चित्र और तातिलका दोनो में सीमान्त उपयोगिता को घटता हुआ दिखाया हैं। घटती सीमान्त उपयोगिता के नियम को संतुष्टि का मूलभूल सिंद्धात या मूलभूत मनोवैज्ञानिक सिंद्धात भी कहते हैं।

उपभोक्ता का संतुलन

एक उपभोक्ता उस समय संतुलन में होता हैं जब वह दी गई वस्तुओं से अधिकतम संतुष्टि प्राप्त करता हैं। उपभोक्ता संतुलन से अभिप्रायः उस स्थिति से है जब उपभोक्ता अपने व्यय को स्थिर रखते हुए अपनी सीमित आय से अपनी संतुष्टि को अधिकतम करना चाहता है। एक उपभोक्ता उस समय संतुलन में होता हैं जब वह ना तो किसी वस्तु की अधिक मात्रा खरीदता हैं और ना ही कम मात्रा खरीदता हैं। एक उपभोक्ता अपनी आय को उस तरीके से खर्च करता हैं ताकि उसको अधिकतम संतुष्टि मिल सकें।

एक वस्तु की स्थिति में उपभोक्ता का संतुलन

एक वस्तु की स्थिति में उपभोक्ता के लिए संतुलन की अवस्था वह होगी जब वह वस्तू की इतनी मात्रा खरीदता हैं कि उसकी संतुष्टि अधिकतम होती हैं। उपभोक्ता किसी वस्तु की कितनी मात्रा खरीदेगा यह दो चीजों पर निर्भर करता हैं।

1. वस्तु की कीमत
2. वस्तु की प्रत्येक इकाई से मिलने वाली सीमान्त उपयोगिता

उपभोक्ता को जब निर्णय लेना होता हैं तो वह वस्तु की कीमत और वस्तु से मिलने वाली सीमान्त उपयोगिता की तुलना करता हैं एक उपभोक्ता उस समय संतुलन में होता हैं जब वस्तु के लिए चुकाई गई कीमत और वस्तु से मिलने वाली सीमान्त उपयोगिता बराबर होती हैं। हमें पता है कि वस्तु से मिलने वाली उपयोगिता को युटिल में और कीमत को मुद्रा के रूप में प्रकट करते हैं।

उपभोक्ता के संतुलन की शर्त

एक वस्तु की स्थिति में उपभोक्ता संतुलन जब होगा तब वस्तु से मिलने वाली सीमान्त उपयोगिता और दी गई कीमत बराबर होती हैं। अर्थात सीमान्त उपयोगिता (MU) = कीमत (P) होगी। यदि MUx>Px हो तो उपभोक्ता संतुलन की अवस्था में नही हैं। इसका अर्थ हैं कि उपभोक्ता को सीमान्त उपयोगिता अधिक मिल रही हैं और कीमत कम चुकानी पड़ रही हैं इसलिए उपभोक्ता उस वस्तू की अधिक मात्रा खरीदेंगे और उपभोक्ता संतुलन की स्थिति में नही होगा। इसलिए जब वो अधिक मात्रा खरीदेगा तो सीमान्त उपयोगिता कम हो जाएगी और सीमान्त उपयोगिता और कीमत बराबर हो जाएगी।

इसी प्रकार यदि MUx<Px हो तो उपभोक्ता संतुलन की अवस्था में नही होगा। उसका अर्थ है कि उपभोक्ता को सीमान्त उपयोगिता कम मिल रही हैं और कीमत अधिक चुकानी पड़ रही हैं। इसलिए उपभोक्ता उस वस्तु की उपभोग मात्रा कम कर देगाा और संतुलन की स्थिति में नही होगा इसलिए जब उपभोक्ता कम मात्रा खरीदेगा तो सीमान्त उपयोगिता कम हो जाएगी और सीमान्त उपयोगिता व कीमत बराबर हो जाएगी।

एक वस्तु की स्थिति में उपभोक्ता का संतुलन

चित्र 2.9

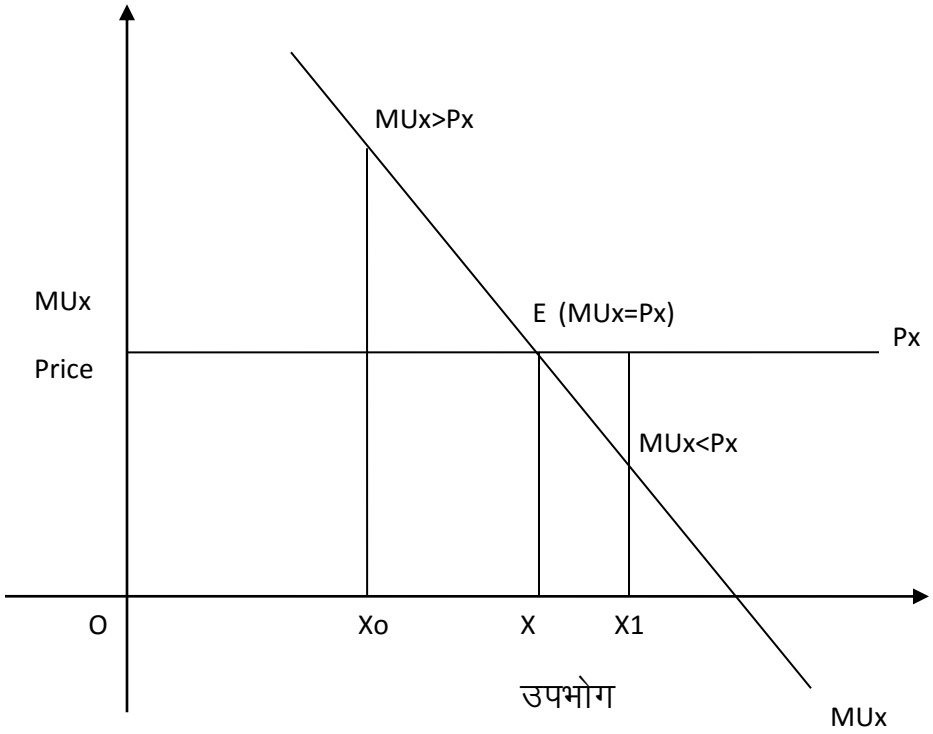

उपरोक्त चित्र –2.9 एक वस्तु की स्थिति में उपभोक्ता संतुलन को दर्शा रहा हैं। E बिन्दु पर वस्तु से मिलने वाली उपयोगिता (MUx)और कीमत (Px) बराबर हैं और उपभोक्ता संतुलन में हैं। E बिन्दू से पहले MUx>Pxहैं इसलिए वस्तु से मिलने वाली सीमान्त उपयोगिता अधिक हैं उपभोक्ता OXo उपभोग को बढाकर OX करेगा और वस्तु से मिलने वाली सीमान्त उपयोगिता और चुकाई गई कीमत बराबर हैं। इसी तरह OX मात्रा से आगे उपभोक्ता जब OX1 मात्रा का उपभोग करता हैं तो वस्तु से मिलने वाली सीमान्त उपयोगिता कम हैं और कीमत अधिक चुकानी पड़ रही हैं। इसलिए उपभोक्ता वस्तु की मात्रा कम खरीदेगा जिससे वस्तु से मिलने वाली सीमान्त उपयोगिता कम हो जाएगी और वस्तु से मिलने वाली सीमान्त उपयोगिता (MUx) की चुकाई गई कीमत (Px) बराबर हो जाएगी।

दो वस्तुओं के संदर्भ में उपभोक्ता का संतुलन

उपभोक्ता वास्तविक जीवन में एक से अधिक वस्तु का उपभाग करता है। इस स्थिति में 'सम सीमान्त उपयोगिता का नियम' आय के अनुकूलतम बटँवारे करता है। सम सीमान्त उपयोगिता के नियम को प्रतिस्थापना के नियम या गौसेन के द्वितीय नियम के नाम से भी जाना जाता है।

सम सीमान्त उपयोगिता का नियम भी घटती सीमान्त उपयोगिता के नियम पर आधारित हैं। सम सीमान्त उपयोगिता नियम के अनुसार उपभोक्ता दो वस्तुओं पर इस तरह खर्च करता हैं जिससे की दो वस्तुओं की सीमान्त उपयोगिताओं का अनुपातउनकी कीमतों के अनुपात के बराबर होता हैं और उपभोग बढ़ने पर सीमान्त उपयोगिता गिरती हैं।

दोनो वस्तुओं की स्थिति में सीमान्त उपयोगिता और कीमत का अनुपात समान रहता हैं हमें पता हैं कि एक वस्तु X के उपभोग की स्थिति में उपभोक्ता उस समय संतुलन में होगा जब

$\frac{MUx}{Px} = MUm$ (मुद्रा की सीमांत उपयोगिता) 1

इसी प्रकार Y वस्तु की स्थिति में

$\frac{MUy}{Py} = MUm$ 2

(1) और (2) समीकरण की तुलना करने पर

$$\frac{MUx}{Px} = \frac{MUy}{Py} = MUm$$

$$\frac{MUx}{Px} = \frac{MUy}{Py}$$

जब $\frac{MUx}{Px} > \frac{MUy}{Py}$ होगा

तो X वस्तु की उपभोग मात्रा बढेगी जिससे

$\frac{MUx}{Px} = \frac{MUy}{Py}$ बराबर हो जायेगी

इसी प्रकार जब $\frac{MUx}{Px} < \frac{MUy}{Py}$ होगा

तो Y वस्तु की उपभोग मात्रा बढेगी और X की मात्रा कम होगी जिससे

$\frac{MUx}{Px} = \frac{MUy}{Py}$ बराबर हो जायेगी।

2.2.4 उपयोगिता का क्रमवाचक सिंद्धात

आधुनिक अर्थशास्त्री उपयोगिता के गणनावाचक माप के सिंद्धात की आलोचना करता हैं। उपयोगिता के क्रमवाचक सिंद्धात के अनुसार उपभोक्ता वस्तु के उपभोग से मिलने वाली उपयोगिता का माप नही कर सकता हैं। उपभोक्ता वस्तु से मिलने वाली उपयोगिता का माप न करके उनके तुलना कर सकता हैं। तुलना करके बता सकता हैं कि वस्तुओं के किस संयोग से ज्यादा उपयोगिता मिलती हैं और किस संयोग से कम उपयोगिता मिलती है। एक उपभोक्ता वस्तुओं से मिलने वाली उपयोगिता को क्रम दे सकता हैं। उदाहरण के लिए उपभोक्ता बता सकता है कि केले का उपभोग करने से कम उपयोगिता मिली है और सेब के उपभोग से उपयोगिता अधिक मिली हैं।सन् 1939 में प्रोफेसर हिक्स ने अपनी पुस्तक Value And Capital में इसकी विस्तृत व्याख्या की हैं।

उदासीनता या तटस्थता वक्र

तटस्थता वक्र विश्लेषण का विकास शुरू में पैरेटो, ऐजवर्थ और फिशर जैसे लेखकों ने किया था। तटस्थता वक्र दो वस्तुओं के उन विभिन्न संयोगो को दर्शाता है जिनसे उपभोक्ता को समान संतुष्टि मिलती हैं अन्य शब्दों में तटस्थता वक्र दो वस्तुओं के उन सभी संयोगो का बिन्दुपथ है जिनसे उपभोगता को समान संतुष्टि मिलती है। तटस्थता वक्र को तालिका व वक्र की सहायता से समझ सकते हैं।

तालिका 2.5

तटस्थता तालिका

वस्तुओं के संयोग	सेब (A)	केले (B)
A	1	16
B	2	11
C	3	7
D	4	4
E	5	2

तालिका– 2.5 दर्शा रही हैं कि सेब और केले के पाँचों संयोग। A, B, C, D और E से समान संतुष्टि मिल रही हैं सेब की एक मात्रा और केले की 16 मात्रा से उतनी ही संतुष्टि मिलती है जितनी की E संयोग के 5 सेब और 2 केले की मात्रा से मिलती हैं। इस प्रकार तटस्थता तालिका उन सभी संयोगों को दर्शाता है जिनसे समान संतुष्टि मिलती है। तटस्थता तालिका की मदद से हम तटस्थता वक्र का निर्माण कर सकते हैं।

तटस्थता वक्र की मान्यताएं

1 उपभोक्ता विवेकशील है

2 क्रमवाचक माप सम्भव है

3 कोटिक्रम दुर्बल है

4 क्रमवाचक विश्लेषण सकर्मकता और निरन्तरता की मान्यता पर आधारित हैं

चित्र – 2.10 तटस्थता वक्र

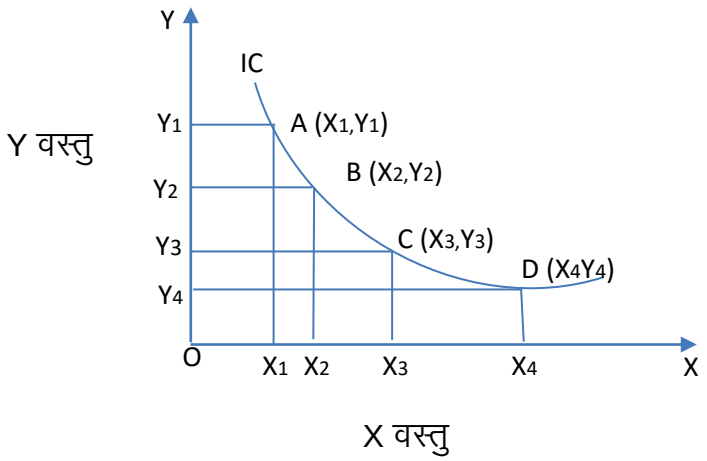

चित्र 2.10 तटस्थता वक्र को दर्शा रहा है। X -Axis पर वस्तु X की उपभोग मात्रा है और Y -Axisपर वस्तु Yकी उपभोग मात्रा है। उपरोक्त चित्र में वस्तु X और Y के 4 उपभोग संयोग है।, B, C और D। इन चारों संयोगों से उपभोक्ता को समान संतुष्टि मिलती है। इसलिए इन चारों संयोगो से बनने वाले वक्र IC को तटस्थता वक्र कहते है। IC वक्र सभी संयोगों का एक बिन्दूपथ है जिनसे समान संतुष्टि मिलती है।

एकदिष्ट अधिमान (Monotonic Preferences)

एकदिष्ट अधिमान एक उपभोक्ता के लिए वो सभी वस्तुओं के संयोग हैं जो कि उपभोक्ता को ज्यादा संतुष्टि देते है। साधारण शब्दों में एकदिष्ट अधिमान के अनुसार जब उपभोग बढता हैं तो कुल उपयोगिता भी बढती हैं। उदाहरण के लिए किसी संयोग (6,4) का एकदिष्ट अधिमान पूछा जाएं तो कम से कम एक वस्तु की अधिक मात्रा जरूर होगी। (6,4) का एकदिष्ट अधिमान (7,4), (6,5) या (7,5) हो सकता है (6,4) का एकदिष्ट अधिमान

(5,4) नही हो सकता। क्योंकि इसमें एक वस्तु की कम मात्रा शामिल है और यह एक एकदिष्ट अधिमान नही हो सकता।

तटस्थता मानचित्र

तटस्थता मानचित्र से अभिप्रायः विभिन्न तटस्थता वक्रों के समूह से हैं। जब एक साथ कई सारे तटस्थता मानचित्र होते हैं तो उसको तटस्थता मानचित्र कहते है। नीचे दिया गया चित्र – 2.11 तटस्थता मानचित्र है।

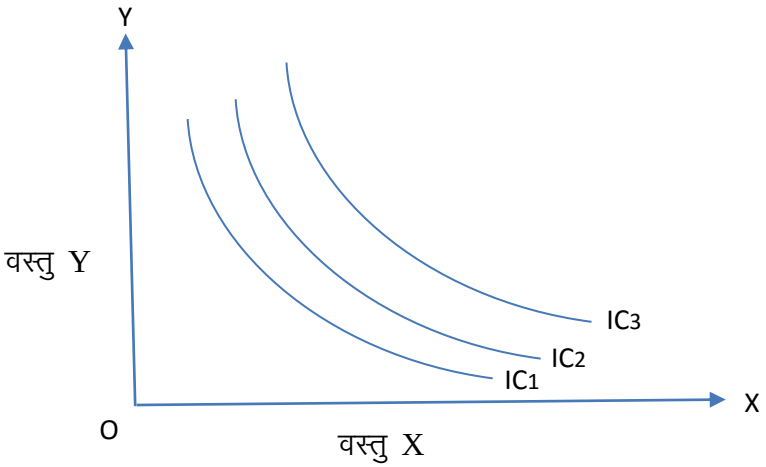

सीमान्त प्रतिस्थापन की दर (Marginal Rate of Substitution)(MRS)

प्रतिस्थापन की सीमान्त दर से अभिप्रायः उस दर से हैं जिससे की एक वस्तु को दूसरी वस्तु से प्रतिस्थापित किया जाता हैं जिससे उपभोक्ता की संतुष्टि समान रहती हैं

$$MRS = \frac{\Delta(\text{ त्यागी गई मात्रा })}{\Delta \text{ (प्राप्त की गई मात्रा)}}$$

यहां पर Δ परिवर्तन को दर्शाता है। X और Y वस्तु है।

$$MRSXY = \frac{\Delta Y}{\Delta X}$$

$$MRSYX = \frac{\Delta X}{\Delta Y}$$

उदाहरण के लिए जब हम X की 1 मात्रा और Y की 10 मात्रा का उपभोग करते है। जब इसमें परिवर्तन करके X की 2 मात्रा करते है और Y की 7 मात्रा कर देते है, जिससे उपभोक्ता की संतुष्टि समान रहती है।

$$MRSXY = \frac{\Delta Y}{\Delta X} = \frac{Y_2 - Y_1}{X_2 - X_1} = \frac{7-10}{2-1} = -3$$

गणितीय रूप से MRS हमेशा ऋणात्मक रहती हैं, क्योकि एक वस्तु की मात्रा अधिक होगी तो दूसरी वस्तु की मात्रा कम होगी जिससे की उपभोक्ता की संतुष्टि समान रहें।

घटती प्रतिस्थापन की सीमान्त दर का नियम

इस नियम के अनुसार MRS हमेशा कम होती रहती हैं। इसके पीछे घटती हुई सीमान्त उपयोगिता का नियम काम करता हैं। इस नियम के कारण MRS कम होती रहती हैं। क्योंकि जिस वस्तु का उपभोग बढता हैं उसकी सीमान्त उपयोगिता कम होती हैं। और जिसका उपभोग कम होता हैं उसकी सीमान्त उपयोगिता बढती है

तटस्थता वक्र की विशेषताएं

1 तटस्थता वक्र की दाल ऋणात्मक होती हैं– इसका अर्थ है कि जब उपभोक्ता एक वस्तु का अधिक उपभोग करते है तो समान संतुष्टि के लिए दूसरी वस्तु का उपभोग कम करना पड़ेगा। इसलिए तटस्थता वक्र का दाल ऋणात्मक होता हैं।

2 तटस्थता वक्र मूल बिन्दु की ओर उन्तोदर (Convex) होते हैं –घटती हुई MRS (प्रतिस्थापन दर) के कारण तटस्थता वक्र हमेशा मूल बिन्दु की ओर उन्नोदर होता हैं और इसलिए MRS इसलिए घटती हैं क्योंकि सीमान्त उपयोगिता घटती रहती हैं।

चित्र 2.12 में तटस्थता वक्र के ऋणात्मकढाल और उन्नतोदर आकार को दिखाया गया है।

चित्र 2.12

तटस्थता वक्र

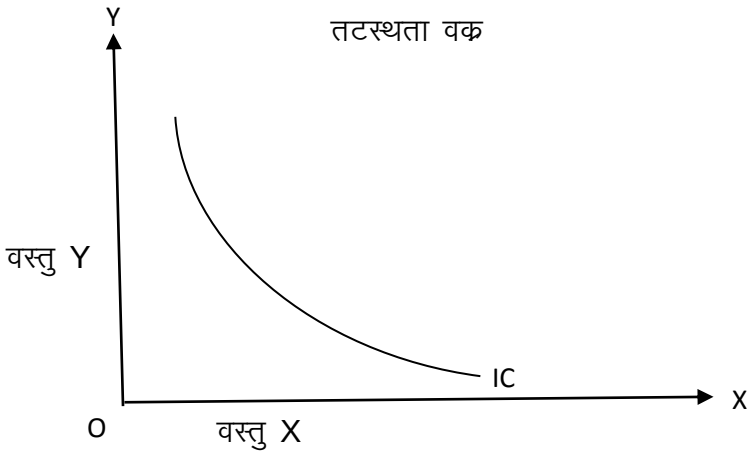

3 उच्च तटस्थता वक्र (IC) की ज्यादा संतुष्टि को दर्शाता हैं।

चित्र – 2.13

तटस्थता वक्र

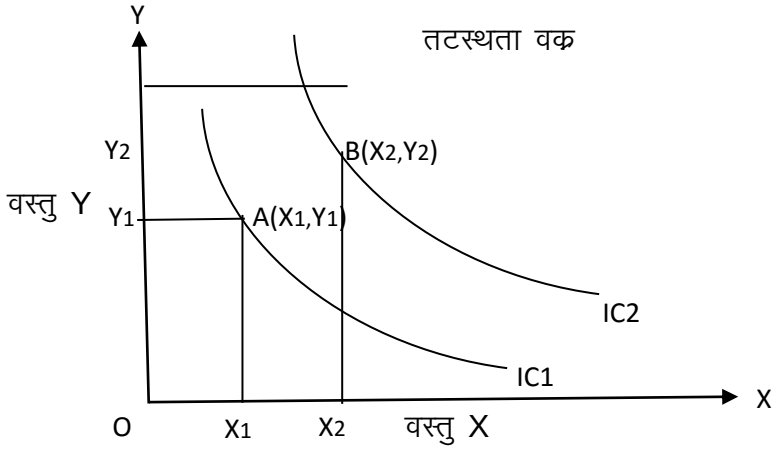

उपरोक्त चित्र में IC1 तटस्थता वक्र कम संतुष्टि को दिखाता हैं और IC2 ज्यादा संतुष्टि को दर्शाता हैं क्योंकि IC1 में वस्तु X और Y की कम मात्रा का उपभोग करते हैं और IC2 तटस्थता वक्र में X और Y वस्तु की अधिक मात्रा का उपभोग करते हैं।

4 तटस्थता वक्र कभी भी एक– दूसरे को काटते नही है

चित्र – 2.14

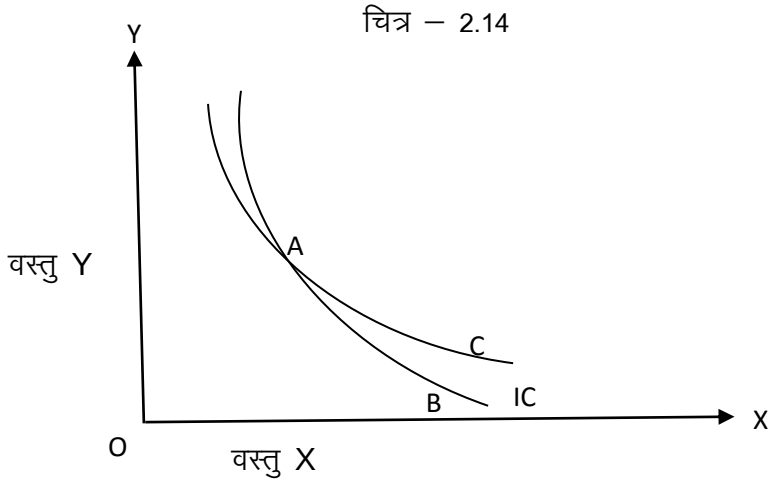

क्योंकि दो तटस्थता वक्र समान स्तर की संतुष्टि प्रदान नही करते हैं। इसलिए दो तटस्थता वक्र कभी भी आपस में काट नही सकते है। क्योंकि जब दो वक्र आपस में काटते है तो उस स्तर पर संतुष्टि समान हो जाती हैं और दो तटस्थता वक्र समान संतुष्टि को नही दर्शाते है। इसलिए दो तटस्थता वक्र आपस में काट नही सकते हैं।

5 तटस्थता वक्र किसी भी अक्ष को स्पर्श नही कर सकता

चित्र –2.15

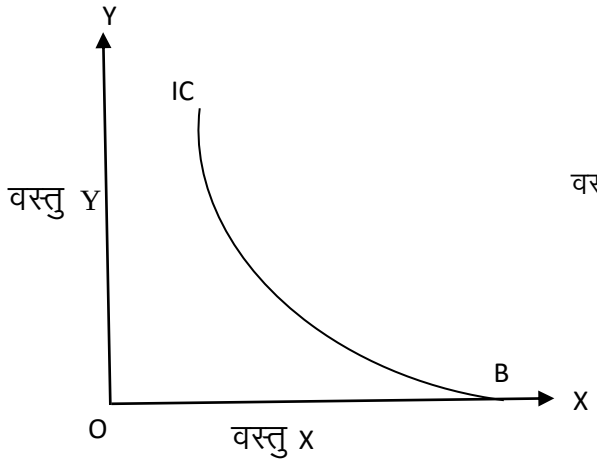

चित्र –2.16

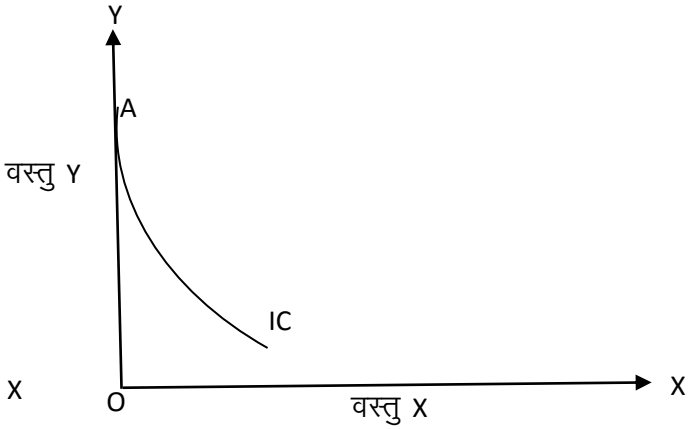

चित्र 2.15 और चित्र 2.16 क्रमशः दो जगहों B और। पर X अक्ष और Y अक्षको स्पर्श कर रहा हैं। यह नही हो सकता क्योंकि तटस्थता वक्र जब किसी भी अक्ष को छूता हैं तो केवल एक वस्तु का उपभोग किया जाता हैं। जबकि तटस्थता वक्र में दो वस्तुएं होती हैं

बजट रेखा

तटस्थता वक्र केवल उन संयोगों की व्याख्या करता हैं जिनसे समान संतुष्टि मिलती हैं। तटस्थता वक्र केवल विभिन्न संभावनाओं को बताता हैं। परंतु वास्तव में उपभोक्ता किस संयोग को खरीदेगा, यह उपभोक्ता की आय व

वस्तु की कीमत पर निर्भर करता हैं। उपभोक्ता अधिकतम किन किन वस्तुओं के संयोगो को खरीद सकता है, यह बजट रेखा से पता चलता हैं।

बजट रेखा दो वस्तुओं के विभिन्न संयोगो का ग्राफीय चित्रण हैं जिन्हे दी हुई आय और कीमत पर उपभोक्ता खरीद सकता हैं। मान लीजिए उपभोक्ता की आय 100रूपये हैं और वस्तु X की कीमत 10 रूपये हैं और वस्तु Y की कीमत 5 रूपये हैं। इस स्थिति में उपभोक्ता X वस्तु की अधिकतम 10 इकाईयां खरीद पाऐंगा और वस्तु Y की अधिकतम 20 इकाईयां खरीद पाऐंगा। इन दोनो बिन्दुओं को मिलाऐगें तो जो रेखा हमें प्राप्त होगी उसकों बजट रेखा कहेंगें।

चित्र – 2.19

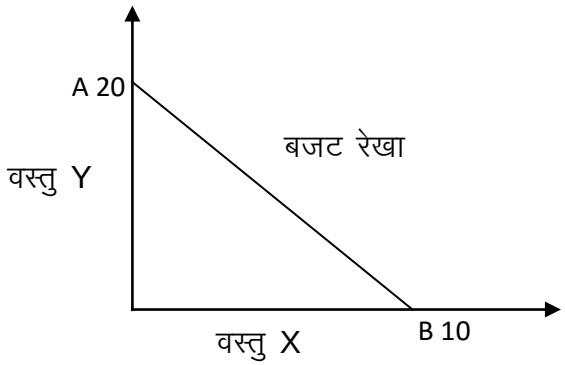

उपरोक्त चित्र – 2.17 में।B एकबजट रेखा हैं इस रेखा से हमें पता चलता हैंकि एक उपभोक्त दी गई कीमत और आय से कितनी मात्रा खरीद सकता हैं।

कीमत रेखा के गणितीय समीकरण को इस प्रकार लिखा जा सकता हैं।

PXQX+PYQY=M

PX= वस्तुX की कीमत

PY =वस्तु Y की कीमत

QX=वस्तु X की मात्रा

QY =वस्तु Y की मात्रा

M =उपभोक्ता की आय

बजट रेखा का ढाल

बजटरेखा का ढाल वस्तु Xकी कीमत और वस्तु Yकी कीमत का अनुपात होता हैं।

बजट रेखा का ढाल $=\frac{Px}{Py}$

बजट रेखा का खिसकांव

उपभोक्ता की आय और वस्तुओं की कीमतों में परिवर्तन का प्रभाव बजटरेखा के आकार पर पड़ता हैं।

उपभोक्ता की आय बढने का बजट रेखा पर प्रभाव

आय बढने पर बजट रेखा ऊपर की ओर शिफ्ट हो जाती हैं।

चित्र – 2.18

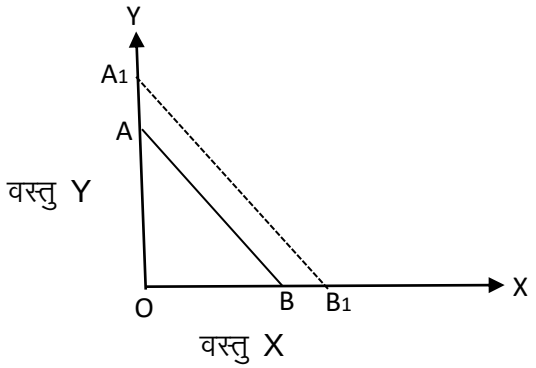

चित्र– 2.18 दर्शा रहा है कि वस्तु जब उपभोक्ता की आय बढती हैं तो उपभोक्ता दोनो वस्तुओं को अधिक खरीदता हैं। जिससे बजट रेखा ऊपर की ओर शिफ्ट हो जाती हैं।

उपभोक्ता की आय घटने का बचत रेखा पर प्रभाव

उपभोक्ता की आय घटने पर बचत रेखा नीचे की ओर शिफ्ट हो जाती हैं।

चित्र– 2.19

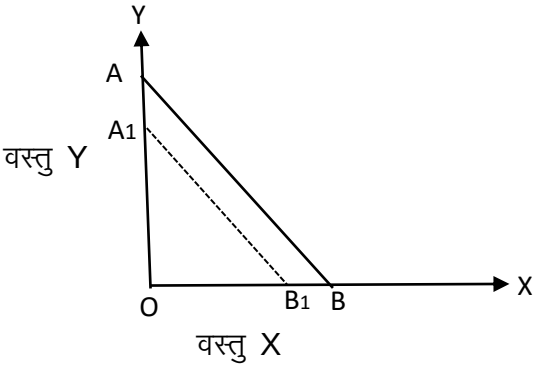

वस्तु X की कीमत कम होने का प्रभाव

वस्तु X की कीमत कम होने से बजट रेखा का संचरण दायी तरह X-axis में होता है। क्योंकि उपभोक्ता X वस्तु की अधिक मात्रा खरीद सकता हैं।

चित्र –2.20

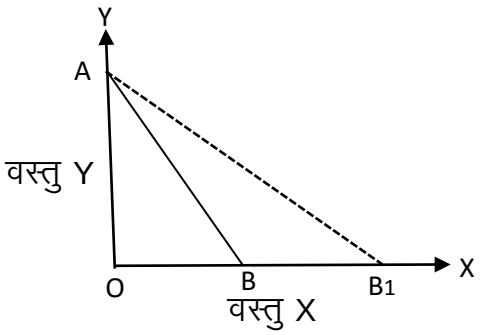

वस्तु X की कीमत बढ़ने का प्रभाव

वस्तु X की कीमत बढने से बजट रेखा का संचरण बायीं ओर X-axis में होता हैं क्योंकि उपभोक्ता X वस्तु की कम मात्रा खरीद सकता हैं

चित्र – 2.21

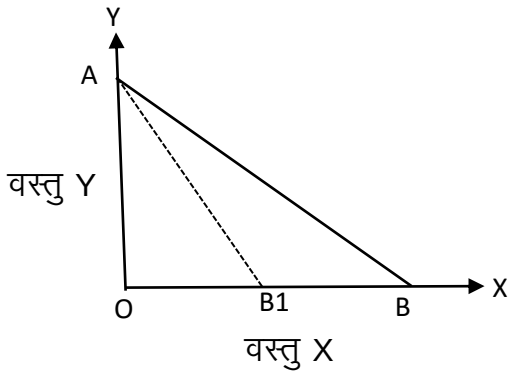

वस्तु Y की कीमत कम होने का प्रभाव

वस्तु Y की कीमत कम होने पर बचतरेखा का संचरण दायीं तरफ हो जाता हैं। इसमें Yवस्तु की अधिक मात्रा खरीदी जाती हैं।

चित्र 2.22

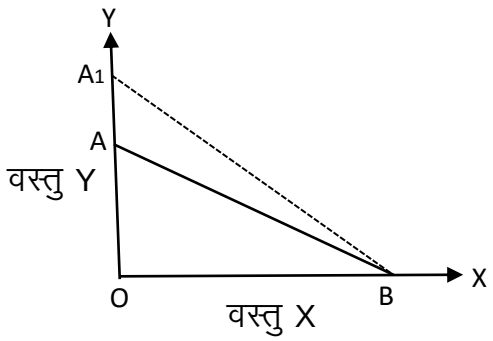

वस्तु Y की कीमत बढने का प्रभाव

वस्तु की कीमत बढने पर बजट रेखा का संचरण नीचे की ओर बायी तरह होता है। इसमें Y वस्तु की कम मात्रा खरीदी जाती है।

चित्र 2.23

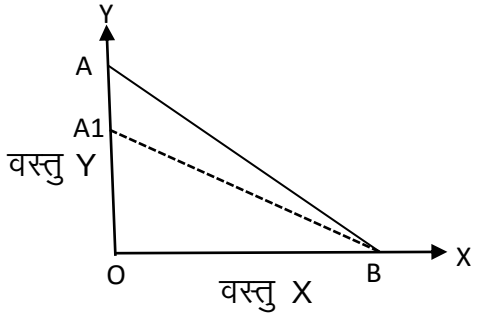

तटस्थता वक्र विश्लेषण की सहायता से उपभोक्ता का संतुलन

उपभोक्ता संतुलन से अभिप्रायः उस स्थिति से हैं जिस पर उपभोक्ता को दी गई कीमतों और उपभोक्ता की आय पर अधिकतम संतुष्टि मिल रही होती हैं उपभोक्ता उस स्थिति में कोई परिवर्तन नही करना चाहता। उपभोक्ता उच्चतम तटस्थता वक्र पर रहना चाहता हैं।

उपभोक्ता संतुलन की शर्ते –

उपभोक्ता संतुलन की 2 शर्ते है

(1) MRSXY = $\frac{Px}{Py}$

यदि MRSXY > $\frac{Px}{Py}$ है, इसका अर्थ है उपभोक्ता X वस्तु के लिए ज्यादा कीमत देने के लिए तैयार है। जिससे की X वस्तु का उपभोग बढ जाऐगा और MRSXY की मात्रा गिर जाऐगी। MRSXY तब तक गिरती रहेगी जब तक MRSXY=$\frac{Px}{Py}$नही हो जाए।

यदि MRSXY < $\frac{Px}{Py}$ है, तब उसका अर्थ है की उपभोक्ता X वस्तु के लिए कम कीमत देने के लिए तैयार है। उससे उपभोक्ता Xको कम खरीदेगा और Y को अधिक खरीदेगा। जिससे की MRSXY बढती जाती है और यह तब तक बढती रहेगी जब तक की MRSXY और $\frac{Px}{Py}$ बराबर नही हो जाती है।

(2) MRS लगातर कम होती रहती है

उपभोक्ता संतुलन की दूसरी शर्त यह है की संतुलन के बिन्दु पर MRS गिरती हुई होनी चाहिए। इसका अर्थ है कि संतुलन बिंदू पर तटस्थता वक्र उन्नतोदर (Convex) होना चाहिए।

चित्र 2.24
उपभोक्ता का संतुलन

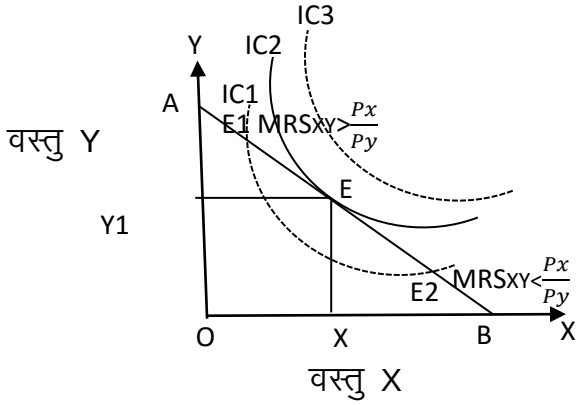

चित्र – 2.24 उपभोक्ता संतुलन की स्थिति को प्रकट कर रहा है। चित्र – 2.24 में E बिन्दू पर उपभोक्ता संतुलन है क्योंकि E बिंदू पर तटस्थता वक्र की ढलान और कीमत रेखा की ढलान दोनो समान है। अर्थात MRSXY और $\frac{Px}{Py}$ दोनो समान है। यहां पर उपभोक्ता को अधिकतम संतुष्टि मिल रही है परन्तु वास्तव में अधिकतम संतुष्टि

IC3 पर मिल रही है। जबकि उपभोक्ता संतुलन IC2 तटस्थता वक्र पर होता है। उसके पीछे कारण है की IC3 पर उपभोक्ता अपनी दी गई आय और कीमतों के आधर पर जा नही सकता है। इसलिए IC3 पर उपभोक्ता संतुलन नही होगा। उसी तरह से IC1 पर भी उपभोक्ता संतुलन नही होगा। E1 बिन्दुजहां पर MRSXY और $\frac{Px}{Py}$ और आपस में काटते है। वहां पर संतुलन नही होगा। इसी तरह E2 बिन्दु पर भी संतुलन नही होगा। E1 बिन्दु पर MRSXY > $\frac{Px}{Py}$ है और E2 बिन्दु पर MRSXY < $\frac{Px}{Py}$ है।

2.2.5 उपभोक्ता का प्रकट अधिमान सिंद्धात

मार्शल का उपभोक्ता व्यवहार का सिंद्धात मनोवैज्ञानिक था। मार्शल का उपयोगिता का माप गणनावाचक था। उसके बाद मार्शल के उपभोक्ता व्यवहार की आलोचना हुई थी। क्योंकि उपयोगिता को मापा नही जा सकता। उसके बाद हिक्स ऐलन ने तटस्थता वक्र का निर्माण किया था। तटस्थता वक्र क्रमवाचक विश्लेषण पर आधारित हैं। क्रमवाचक उपयोगिता विश्लेषण में दुर्बल कोटिक्रम की मान्यता ली गई हैं। दुर्बल कोटिक्रम की मान्यता अवैज्ञानिक हैं उपभोक्ता के व्यवहार की महत्वपूर्ण देन पॉल सैम्युलसन का प्रकट अधिमान सिंद्धात हैं। प्रकट अधिमान सिंद्धात में उपभोक्ता वस्तुओं के अन्य संयोगो की तुलना में एक विशेष संयोग को खरीद कर प्रकट करता हैं प्रकट अधिमान सिंद्धात ने उपभोक्ता के व्यवहार के वैज्ञानिक सिंद्धात की नीव डालने का प्रयत्न किया हैं।

प्रकट अधिमान सिंद्धात की मान्यताएं

1. **विवेकशीलता**– उपभोक्ता विवेकशील हैं उपभोक्ता दी हुई आय और कीमतों से उपभोक्ता की संतुष्टि अधिकतम करता हैं।
2. **सकर्मकता**– उपभोक्ता की पसंद में सकर्मकता हैं माना कि तीन बंडल A, B और C हैं यदि A>B है और B>C है तो A>E होगा।
3. **निरन्तरता**– उपभोक्ता का टेस्ट स्थिर रहता हैं यदि उपभोक्ता को A, B से ज्यादा पसंद करता हैं। दूसरी स्थिति में उपभोक्ता B बंडल का। की तुलना में अधिमान नही देगा। यदि A>B है तो B>Aनही होगा।
4. **कीमत प्रलोभन** – कीमत में परिवर्तन का वस्तुओं की मात्रा के रूप में प्रभाव पड़ता हैं।

प्रकट अधिमान परिकल्पना

पॉल सैम्युलसन का प्रकट अधिमान सिंद्धात अधिमान परिकल्पना पर आधारित हैं। प्रकट अधिमान परिकल्पना के अनुसार यदि बाजार में दो वस्तुओं के कई सारे वैकल्पिक संयोग उपलब्ध हैं और उपभोक्ता उन सभी सहयोगो में से। संयोग को खरीदने के लिए चुन लेता हैं तो उसका अर्थ हैं कि उपभोक्ता ने अपने अधिमान को प्रकट कर दिया हैं। उपभोक्ता अन्य संयोगो को त्याग देता है। उपभोक्ता कई सारे संयोगों में उदासीन नही होता हैं उपभोक्ता अपनी पसंद कों प्रकट कर देता हैं।

चित्र 2.25

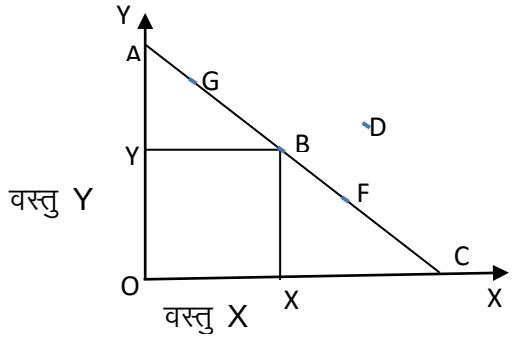

चित्र–2.25 प्रकट अधिमान सिंद्धात की व्यांख्या करता हैं। उपभोक्ता की आय और वस्तुओं की कीमतों के आधार पर।C एक बजट रेखा हैं उपभोक्ता।C बजट रेखा और रेखा के नीचे के सभी संयोंगों को खरीद सकता हैं परंतु बजट रेखा से बाहर के संयोगो का उपभोक्ता नही खरीद सकता है। जब उपभोक्ता के पास कई सारे संयोग हैं, लेकिन उपभोक्ता उन सहयोगों में से B संयोग को खरीद लेता हैं। यह अन्य संयोगों की तुलना में प्रकट अधिमान हैं। B संयोग में उपभोक्ता X वस्तु की OX मात्रा और Y वस्तु की OY मात्रा खरीदता हैं और अपना अधिमान प्रकट करता है।

आय उपभोक्ता वक्र

उपभोक्ता का संतुलन उपभोक्ता की रूची ,पसंद, वस्तुओं की कीमतों और उपभोक्ता की आय पर निर्भर करता हैं वस्तुओं की कीमतों और उपभोक्ता की आय में परिवर्तन होने पर उपभोक्ता के संतुलन में परिवर्तन होता हैं और उपभोग की मात्रा बदल जाती हैं।

उसी प्रकार आय उपभोग वर्क आय प्रभाव की व्याख्यां करता हैं। आय प्रभाव उपभोक्ता की मुद्रा आय में परिवर्तनों के उपभोक्ता के खरीदी गई मात्रा में परिवर्तन को बताता हैं। आय उपभोग वर्क का निर्माण करने के लिए उपभोक्ता की रूची और वस्तु की कीमतों को स्थिर माना गया हैं। आय उपभोग वर्क निकालने के लिए केवल आय में परिवर्तन को महत्व दिया जाता हैं। आय उपभोग वर्क को निम्नलिखित चित्र की सहायता से समझा सकते हैं।

चित्र –2.26
आय उपभोग वक्र

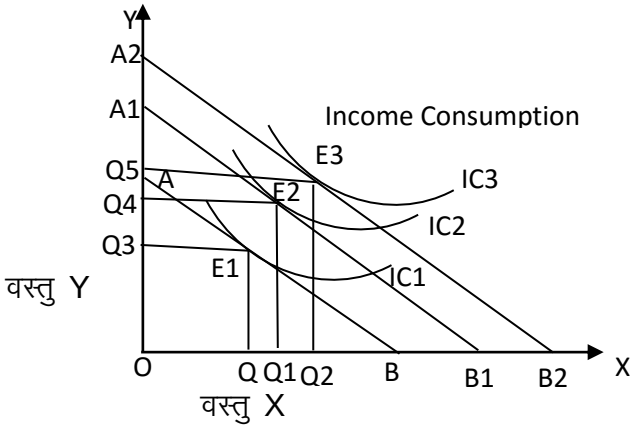

चित्र – 2.26 आय उपभोग वर्क की व्याख्या करता हैं आय में परिवर्तन होने से पहले E_1 बिन्दु उपभोक्ता संतुलन बिन्दु है। जहां पर MRSXY और $\frac{Px}{Py}$ दोनो समान है और आपस में स्पर्श कर रहे हैं। जब उपभोक्ता की आय बढ जाती हैं तो कीमत रेखा शिफट होकर A_1 B_1 हो जाती हैं और उपभोक्ता संतुलन E_2 पर होता है। E_2 पर उपभोक्ता X वस्तु और Y वस्तु की अधिक मात्रा खरीदता हैं। जब उपभोक्ता की आय में ओर अधिक वृद्धि होती हैं तो कीमत रेखा शिफट होकर A_2 B_2 हो जाती हैं। ओर उपभोक्ता संतुलन E3 हो जाता हैं। E3 पर X वस्तु ओर Y वस्तु दोनो की अधिक मात्रा खरीदी जाती हैं। जब संतुलन बिन्दु E1, E2 और E3 को आपस में मिलाया जाता हैं तो हमे आय उपभोग वक्र प्राप्त होता हैं उपरोक्त उदाहरण में हमने सामान्य वस्तुओं को लिया हैं क्योंकि सामान्य वस्तुओं मे आय प्रभाव धनात्मक होता हैं। इसलिए सामान्य वस्तुओं को आय उपभोग वर्क धनात्मक होता हैं

X- वस्तु के घटिया होने पर आय उपभोग वक्र

चित्र 2.27

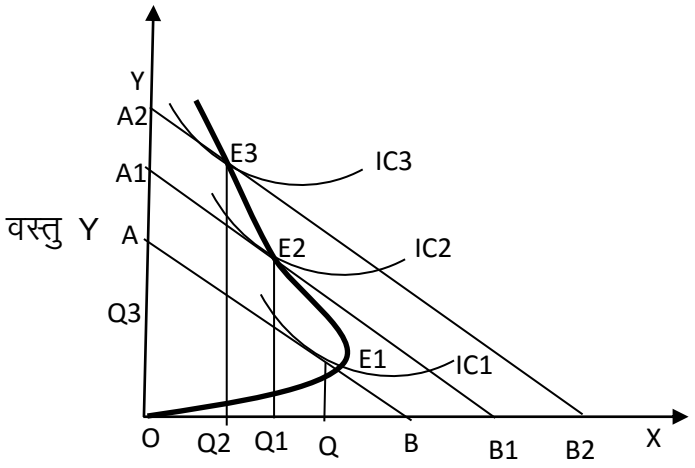

आय उपभोग वक्र

उपरोक्त चित्र में स्पष्ट हैं कि यह आय उपभोग वर्क X वस्तु को घटिया बता रहा हैं। और Y वस्तु को सामान्य बता रहा हैं। क्योंकि आय के बढने पर जब कीमत रेखा दाई तरफ शिफट हो रही हैं तो उपभोक्ता X वस्तु की मात्रा कम खरीदता हैं। आय बढने पर जब मांग कम होती हैं तो उसे हम घटिया वस्तु कहते हैं।

Y वस्तु के घटिया होने पर आय उपभोग वक्र

चित्र – 2.28

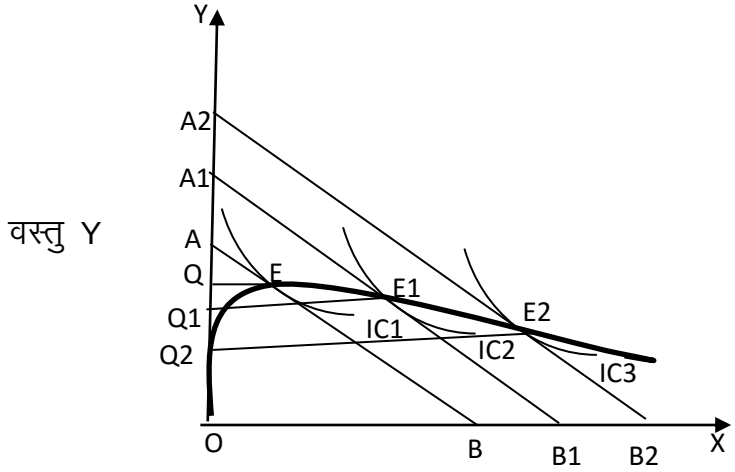

आय उपभोग वक्र

उपरोक्त चित्र में स्प्ष्ट हैं कि आय उपभोग वर्क Y वस्तु को घटिया बता रहा हैं X वस्तु को सामान्य बता रहा हैं। क्योंकि आय के बढने पर जब कीमत रेखा दायीं तरफ शिफट हो रही हैं तो उपभोक्ता X वस्तु की अधिक मात्रा

खरीद रहा हैं और Y वस्तु की मात्रा कम खरीद रहा हैं। वह घटिया वस्तु होती हैं जो आय के बढने के साथ जिनकी मांग कम होती रहती हैं। इसलिए उपरोक्त रेखा चित्र Y वस्तु को घटिया बता रहा हैं।

2.4 ऐंजल वक्र

ऐंजल वक एक वस्तु उपभोक्ता की आय के बीच संबंध बताता हैं। यह उपभोक्ता की आय में परिवर्तन का प्रभाव इसकी मांग पर दर्शाता हैं। आय उपभोग वक में आय का परिवर्तन दोनो वस्तुओं की मांग पर दिखाया जाता हैं जबकि ऐंजल वक में आय का प्रभाव केवल एक वस्तु में दिखाया जाता हैं।

आय प्रभाव से ऐंजल वक निकालना

चित्र 2.29 (A)

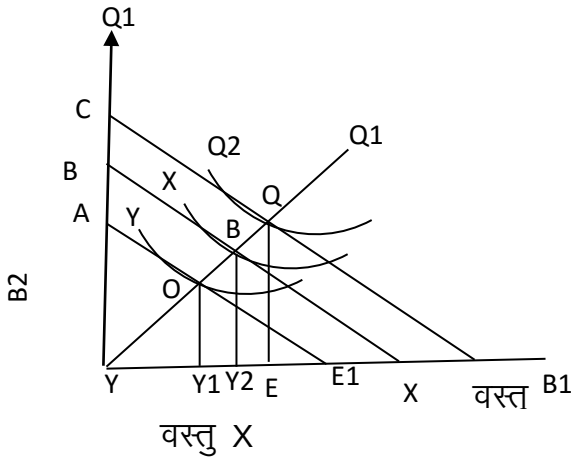

(B) ऐंजल वक

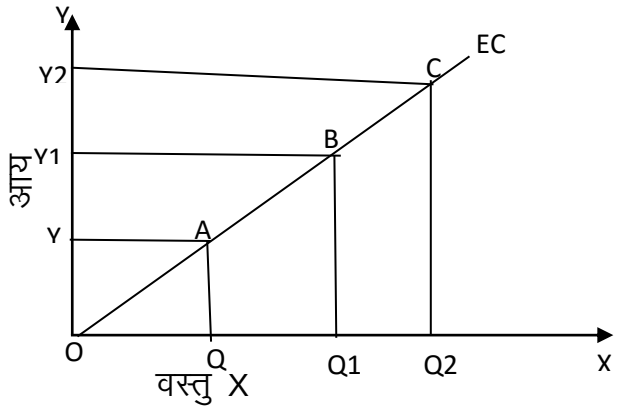

उपरोक्त चित्र के A पार्ट में आय उपभोग वक को दिखाया गया हैं। आय उपभोग वक में दोनो वस्तुओं को शामिल करते हैं। जबकि ऐंजल वक में किसी एक वस्तु को शामिल किया जाता हैं। इसलिए आय उपभोग वक से ऐंजल वक की व्युत्पति करेंगे। हम जानते है कि आय के बढने पर वस्तु X की मात्रा QQ से QQ1 और QQ2 हो जाती हैं। उस तरह से हम पार्ट B में ऐंजल वक की व्युत्पति करेंगें। ऐंजल वक दिखा रहा हैं कि आय के OY से OY1 और OY2 होने पर वस्तु X की उपभोग मात्रा OQ से OQ1 और OQ2 हो जाती हैं। बिन्दु A, B और C को मिलाने से हमें ऐंजल वक प्राप्त होगा। जो कि सामान्य वस्तु की स्थिति बता रहा हैं। घटिया वस्तु में ऐंजल वक ऋणात्मक होगा।

2.5 वस्तुओं के प्रकार

वस्तुएं दो तरह की होती हैं।

1 प्रतिस्थापक वस्तुएं

2 पूरक वस्तुएं

2.5.1 प्रतिस्थापक वस्तुएं

प्रतिस्थापक वस्तुऐं वे वस्तुएं होती हैं जिन्हे उपभोक्ता अपनी आवश्यकता के लिए एक दूसरे के स्थान पर प्रयोग किया जा सकता हैं जैसे : चाय ओर कॉफी प्रतिस्थापक वस्तुएं है। इनका कीमत ओर मात्रा के साथ धनात्मक संबंध

होता हैं जैसे चाय की कीमत कम होने पर चाय की मांग बढ जाएगी और हम कॉफी की मांग करना कम कर देंगें। इसलिए चाय की कीमत ओर कॉफी की मांग धनात्मक संबंध होता हैं।

चित्र 2.30 प्रतिस्थापक वस्तुएं

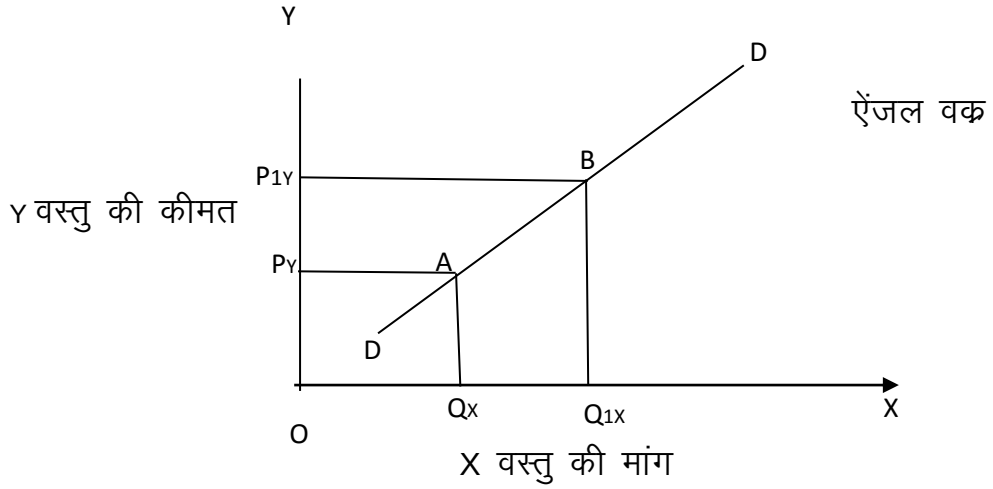

उपरोक्त चित्र प्रतिस्थापक वस्तु में कीमत और मांग का संबंध बता रहा हैं उपरोक्त चित्र से स्पष्ट हैं कि जब Y-वस्तु की कीमत OPY से बढकर OP1Y हो जाती हैं तो X वस्तु की मांग बढकर OQX से बढकर OQ1X एक्स हो जाती हैं।

2.5.2 पूरक वस्तुए

पूरक वस्तुएं वे वस्तुएं होती हैं जिनका प्रयोग एक साथ उपभोक्ता अपनी आवश्यकता की संतुष्टि के लिए एक साथ उपभोग करता हैं। पूरक वस्तुओं में कीमत ओर मात्रा में ऋणात्मक संबंध होता हैं। उदाहरण के लिए चीनी और चाय की पूरक मांग हैं, दोनो एक साथ मिलकर हमारी एक मांग की पूर्ति करते हैं। उदाहरण के लिए यदि चीनी की कीमत बढ जाती है तो चीनी की मांग कम हो जाएगी और इसका प्रभाव चाय की मांग पर पडेगा और चाय की मांग भी कम हो जाएगी। पूरक वस्तुओं में इसलिए कीमत और मात्रा में ऋणात्मक संबंध होता हैं।

चित्र 2.31 पूरक वस्तुएं

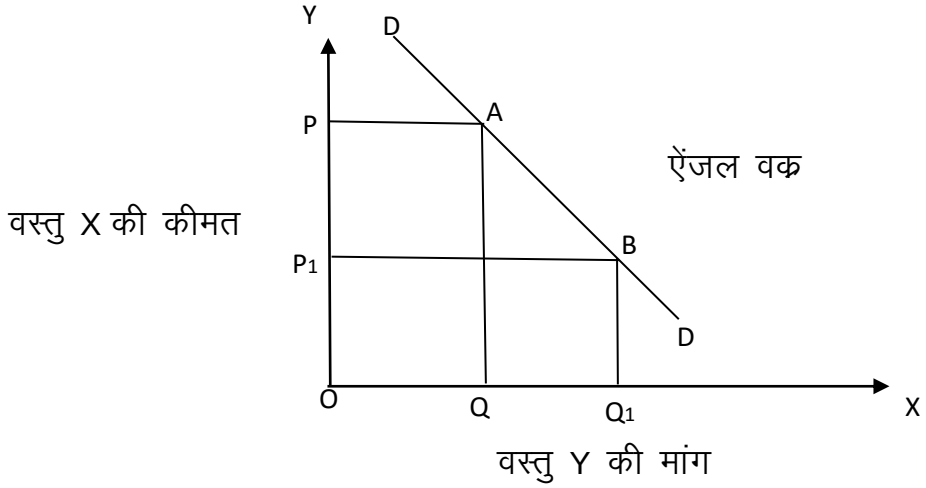

उपरोक्त चित्र पूरक वस्तुओं में कीमत और मात्रा का ऋणात्मक संबंध बता रहा हैं। जब कीमत OPसे कम होकर, OP1 हो जाती हैं तो मात्रा OQ से बढकर OQ1हो जाती हैं। ढालपूर्ण वस्तुओं में ऋणात्मक होता हैं।

2.6 बाजार मांग वक्र

बाजार मांग वक्रबाजार मांग तालिका का ग्राफिक का निरूपण हैं। बाजार मांग वक्र व्यक्तिगत मांग वक्र का क्षैतिज योग हैं।

चित्र 2.32

बाजार मांग वक्र

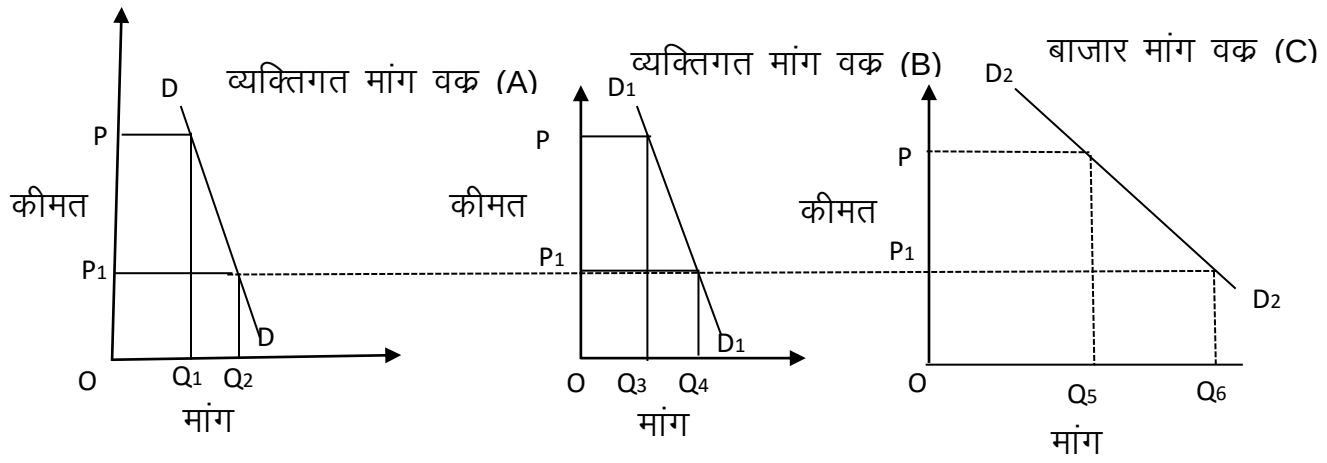

उपरोक्त चित्र व्यक्तिगत मांग वक्र और बाजार मांग वक्र की व्याख्या करता हैं रेखाचित्र A और B व्यक्तिगत मांग के बारे में व्याख्या कर रहा हैं। पार्ट C बाजार मांग वक्र की व्यांख्या कर रहा हैं। कीमत के सामान रहने पर अर्थात OP रहने पर दो व्यक्तिगत मांग OQ_1 और OQ_3 का जोड़ OQ_5 हैं उसी प्रकार जब कीमत कम होती हैं और OP_1 हो जाती हैं मांग OQ_2 और OQ_4 का जोड़ OQ_6 हैं। इसी प्रकार हमें बाजार मांग वक्र व्यक्तिगत मांग वक्र का क्षैतिज जोड़ हैं।

बाजार मांग अधिक चपटा होता हैं। क्योकि कीमत परिवर्तन के कारण व्यक्तिगत मांग की तुलना में बाजार मांग में तुलनात्मक रूप से अधिक परिवर्तन होता हैं

2.7 बाह्यताओं के प्रभाव

हमने अब तक मांग सिंद्धात में यह मान्यता ली थी कि एक व्यक्ति की मांग दूसरे व्यक्ति या व्यक्तियों की मांग पर निर्भर नही करती हैं। बाजार मांग वक्र व्यक्तिगत बाजार मांग वक्र का क्षैतिज जोड़ होता हैं लेकिन बाह्यताओं के होने के कारण बाजार मांग वक्र व्यक्तिगत मांग वक्र का क्षैतिज जोड नही हो सकता हैं। प्रो0 लिबन्स्टीन ने उपभोक्ता मांग सिंद्धात को बैडबेगन, सनॉब तथा वैठलेन प्रभाव के रूप में व्यांख्या की हैं एक उपभोक्ता की वस्तू की मांग दूसरी उपभोक्ताओं की मांग को प्रभावित भी करती हैं और प्रभावित होती हैं। बाह्यताओं के तीन प्रकार हैं–

1. बैडवैगन प्रभाव
2. स्नोब प्रभाव
3. वैब्लेन प्रभाव

1. बैंडवेगन प्रभाव

बैंडवेगन यह प्रभाव यह बताता हैं, कि एक उपभोक्ता की मांग दूसरे उपभोक्ताओं की मांग बढने से ओर ज्यादा बढ जाती हैं। एक उपभोक्ता की मांग दूसरे उपभोक्ताओं की मांग द्वारा निर्धारित होती हैं। बैडवैगन प्रभाव में धनात्मक शुद्ध बाह्यता होती हैं जिससे की शुद्ध रूप से मांग बढ जाती हैं बैंडवेगन शब्द का अभिप्राय होता हैं भेडचाल। बैंडवेगन प्रभाव दूसरों से प्रभावित होता हैं यह जूतों ओर कपड़ो की ओर बच्चों के खिलौनों में होता हैं।

2. स्नोब प्रभाव

स्नोब प्रभाव बैंडवेगन प्रभाव के विपरित होता हैं यह भी दूसरे लोगो की मांग पर निर्भर करता हैं परन्तु यह ऋणात्मक शुद्ध बाह्यता पर निर्भर करती हैं। जब बाजार में किसी वस्तु की मांग बढने लगती हैं तो कुछ उपभोक्ता उन वस्तुओ का उपभोग कम बढाते हैं। स्नॉव प्रभाव प्रतिष्ठित वस्तुओं में होता हैं।

3. वैब्लैन प्रभाव

वैब्लैन प्रभाव को प्रदर्शन प्रभाव भी कहते हैं जिस प्रभाव में कीमत बढने पर उपभोक्ता वस्तुओं की मांग को कम करने की बजाय मांग को बढा देता हैं। वैब्लेन प्रभाव की जब उपस्थिति होती हैं तो मांग का नियम काम नही करता हैं। वैब्लेन प्रभाव में कीमत प्रभाव ऋणात्मक होने की बजाय धनात्मक होता हैं। यहां पर उपभोक्ता वस्तु की गुणवत्ता उसकी कीमत पर निर्धारित करता हैं। स्नॉब प्रभाव और वैब्लेन प्रभाव दोनो अलग–अलग हैं स्नॉब प्रभाव अन्य व्यक्तियों के उपयोग पर निर्भर करता हैं जबकि वैब्लेन प्रभाव वस्तु की कीमत पर निर्भर करता हैं।

2.8 उपभोक्ता बचत

उपभोक्ता की बचत की धारणा का विकास फ्रांस के अर्थशास्त्री डयुपिट ने 1884 में किया था। उसके बाद मार्शल ने उस सिंद्धात का और अधिक विकास किया था। उपभोक्ता सामान खरीदते समय कई बार यह सोचता हैं जो वह वस्तु खरीद रहा हैं उससे संतुष्टि अधिक मिल रही हैं लेकिन कीमत कम चुकानी पड़ रही हैं यही से उपभोक्ता की बचत की अवधारणा का विकास हुआ हैं उपभोक्ता को मिली संतुष्टि और चुकाई गई कीमत का अंतर ही उपभोक्ता की बचत हैं।

मान लीजिए उपभोक्ता किसी पुस्तक के 500 रूपये तक देने के लिए तैयार हैं परन्तु बाजार में उस पुस्तक की कीमत 400 रूपये हैं। इस केस में उपभोक्ता 500–400=100 रूपये होगी।

गणनावाचक उपयोगिता की मदद से उपभोक्ता की बचतः

उपभोक्ता की बजत = उपभोक्ता जो कीमत देना चाहता हैं – उपभोक्ता वास्तव मे जो कीमत देता है

उपभोक्ता की बचत को निम्नलिखित तालिका से समझा सकते हैं।

तालिक 2.6

उपभोक्ता की बचत

मात्रा	सीमान्त उपयोगिता	कीमत	उपभोक्ता की बचत
1	50	10	50-10 = 40
2	40	10	40-10 = 30
3	30	10	40-10 = 20
4	20	10	20-10 = 10
5	10	10	10-10 = 0
	150	50	150-50=100

उपभोक्ता की बचत= कुल उपयोगिता– मात्रा x कीमत

=150-10x5=150 – 50=100

तालिका 2.8 से स्पष्ट हैं कि एक इकाई के लिए उपभोक्ता 50रूपये देने के लिए तैयार हैं जबकि कीमत 10 रूपये हैं यहां पर उपभोक्ता की बचत 50–10=40 रूपये हैं इस प्रकार दूसरी इकाई पर 30 रूपये, तीसरी इकाई पर 20 और चौथी इकाई पर 10 रूपये उपभोक्ता की बचत हैं। पांचवी इकाई पर कोई उपभोक्ता की बचत नही है क्योंकि 5वीं इकाई पर 10 रूपये की सीमान्त उपयोगिता मिलती हैं और 10 रूपये ही चुकाने पड़ रही हैं। उस प्रकार यहा पर कोई उपभोक्ता की बचत नही हैं कुल मिलाकर उपभोक्ता की बचत 100 रूपये हैं,

चित्र 2.33

उपभोक्ता की बचत

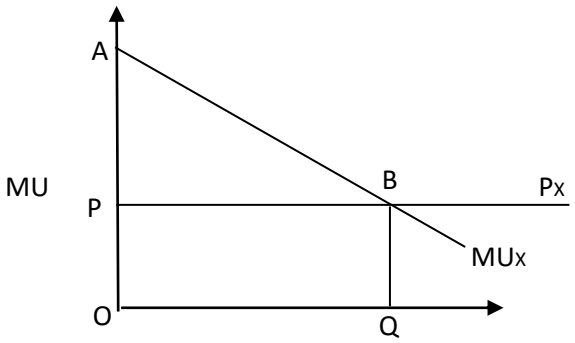

उपरोक्त चित्र APB उपभोक्ता की बचत है। OQ मात्रा पर APB के बराबर उपभोक्ता की बचत है।

2.9 सारांश

इस यूनिट में हमने उपभोकता के व्यवहार का अघ्ययन किया हैं उपभोक्ता व्यवहार का अध्ययन उत्पादक के लिए बहुत जरूरी हैं। क्योंकि उपभोक्ता व्यवहार का अध्ययन करके उत्पादक उत्पादन करता है। उपभोक्ता की वरीयता का उत्पादक ध्यान रखते हैं। उपभोक्ता व्यवहार का अध्ययन करने के लिए इस यूनिट में 3 सिंद्धातों की व्यांख्या की हैं। उपभोक्ता व्यवहार का अध्ययन करने के लिए गणनावाचक उपयोगिता विश्लेषण, क्रमवाचक उपयोगिता विश्लेषण और प्रकट अधिमान सिंद्धात का अध्ययन किया हैं। गणनावाचक उपयोगिता विश्लेषण में संतुष्टि का गणनावाचक माप किया जाता हैं संतुष्टि को इस सिंद्धात में मापा जा सकता है। इस सिंद्धात का विकास नवप्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों ने किया हैं।क्रमवाचक उपयोगिता विश्लेषण में उपयोगिता को मापा नही जा सकता। इस सिंद्धात में उपयोगिता का गणना वाचक माप सम्भव नही हैं। इस सिंद्धात का विकास हिक्स – ऐलेन जैसे अर्थशासत्रियों ने किया था। क्रमवाचक उपयोगिता विश्लेषण की कमी यह है कि यह दुर्बलकोटिक्रम की मान्यता लेता हैं। इस सिंद्धात की कमी को देखते हुए प्रकट अधिमान सिंद्धात का विकास सैम्युलसन ने किया था। यह सिंद्धात स्ट्रॉग कोटिक्रम पर आधारित हैं। आगे नेटवर्क बाह्यताओं का विश्लेषण किया हैं। जिसमें बैडवेगन, स्नोव और वैब्लेन प्रभाव की व्यांख्या की हैं। सबसे अंत में उपभोक्ता की बचत की व्यांख्या की हैं।

2.10 मुख्य शब्दावली

- **कुल उपयोगिता**– कुल उपयोगिता से अभिप्राय सभी इकाईयो से प्राप्त उपयोगिता का जोड है।
- **सीमान्त उपयोगिता**– एक अतिरिक्त किसी वस्तु की मात्रा का उपभोग करने से प्राप्त होने वाली अतिरिक्त उपयोगिता है।

- **अनधिमान वक्र**– अनधिमान वक्र दो वस्तुओं के उन सभी संयोगों को बताता है जिनसे समान संतुष्टि प्राप्त होती है।
- **प्रतिस्थापन की सीमान्त दर**– यह वह दर होती है जिस पर एक वस्तु को दूसरी वस्तु से बदला जाता है ताकि संतुष्टि समान रहे।
- **बजट रेखा**– बजट रेखा दो वस्तुओं की कीमतों का अनुपात है।
- **मांग का नियम**– अन्य बातों के स्थिर रहने पर कीमत और मांगी गई मात्रा में विपरित संबंध होता है।
- **मांग व्रक** : मांग तालिका का ग्राफीय निरूपण है।
- **स्थानापन्न वस्तुएं**– ये वे वस्तुएं होती है जिनका आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए एक – दूसरे की जगह प्रयोग किया जा सकता है।
- **पूरक वस्तुएं**– वे वस्तुएं होती है जिनका प्रयोग एक साथ एक विशेष आवश्यकता की संतुष्टि के लिए किया जाता है।
- **सामान्य वस्तुएं**– वे वस्तुएं होती है जिनका आय के साथ ऋणात्मक सम्बन्ध होता है।

2.11 अपनी प्रगति जानिए के प्रश्न–

1. दोनो स्थानापन्न और आय प्रभावों का योग ..... कहलाता है।
2. यदि एक वस्तु की कीमत में कमी से दूसरी वस्तु की मांग बढ जाती है तो दोनो वस्तुएं कहलाती है।
3. सामान्य वस्तु वह होती है जिनका आय के साथ ..... सम्बन्ध होता है।
4. TU जब अधिकतम होती है तब MU ..... होती है।
5. प्रकट अधिमान सिद्धान्त का विकास ..... अर्थशास्त्र ने किया था।
6. घटिया वस्तुओं में आय लोच ..... होती है।
7. बाजार मांग वक्र व्यक्तिगत मांग वक्र का ..... होता है।

2.12 अपनी प्रगति जानिए के उत्तर

1. कीमत प्रभाव
2. पूरक वस्तुएं
3. धनात्मक
4. शुन्य
5. सैम्युलसन
6. ऋणात्मक
7. जोड़

2.13 अभ्यास हेतु प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. मांग का नियम क्या है ?
2. मांग में वृद्धि और विस्तार में अन्तर बताएं ?
3. सीमान्त उपयोगिता क्या है ?
4. उपभोक्ता की बचत क्या है ?
5. किस अर्थशास्त्री ने क्रमवाचक विश्लेषण का विकास किया ?

6. सम – सीमांत उपयोगिता का नियम क्या है ?
7. सामान्य वस्तु और घटिया वस्तु में अन्तर बताएं ?
8. बाजार मांग वक्र क्या है ?
9. ऐंजल वक्र और आय उपभोग वक्र में अन्तर बताएं
10. तटस्था वक्र की विशेषताएं लिखिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. सम – सीमान्त उपयोगिता के नियम में मांग वक्र जैसे व्युत्पन्न किया जाता है।
2. हिक्स के अनधिमान वक्र सिद्धान्त का आलोचनात्मक मूल्यांकन करें ?
3. गिफिन वस्तु की हालत मेंPCC से मांग वक्र को कैसे निकालेगें ?
4. आय प्रभाव और कीमत प्रभाव की व्याख्या करे ?
5. हिक्स के द्वारा मांग के सिद्धान्त की पुनरावृति किन तत्वों के कारण हुई ?

2.14 आप भी पढ सकते है एवम् सन्दर्भ सूची

- Ahuga, H.L. (2016).Advance Economic Theory (6th edition). New Delhi: S. Chand & Company Pvt Ltd, Hindi Medium
- Jhingan, M.L. (2004). Micro Economics (2nd edition). New Delhi : Vrinda Publication Pvt Ltd. (Hindi Medium)
- Singh, S.P. (2013). Micro Econmics (2nd Edition). New Delhi: S Chand & Company Pvt Ltd, Hindi Medium
- Verma, K.N. (2014). Micro Economics Theory (2nd Edition). Jalandhar, Punjab: Vishal Publishing Co., Hindi Medium
- Dwivedi, D.N. (2006). Microeconomics Theory & Application (1st edition). New Delhi: Pearson Education in SouthAsia.
- Koutsoyiannis,A. (1975). Modern Microeconomics (2nd edition). London : Macmillan Publishers Ltd.

इकाई – 3

उत्पादन तथा लागत

इकाई की रूपरेखा

3.0 परिचय

3.1 इकाई के उद्देश्य

3.2 उत्पादन के नियम

- 3.2.1 अल्पकाल में उत्पादन के नियम
- 3.2.2 दीर्घकाल में उत्पादन के नियम

3.3 बचते व हानियाँ

- 3.3.1 आन्तरिक बचते व हानियाँ
- 3.3.2 बाहरी बचते व हानियाँ

3.4 लागत

- 3.4.1 अल्पकाल में लागत व लागत वक्र
- 3.4.2 दीर्घकाल में लागत व लागत वक्र

3.5 बहुउत्पाद फर्म का अनूकूलतम आगत संयोग

3.6 तकनीकी परिवर्तन और उत्पादन फलन–हिक्स की अवधारणा।

3.7 प्रतिस्थापन्न की लोच

3.8 उत्पादन फलन की विशेषताएं

- 3.8.1 कोब डगलस उत्पादन फलन की विशेषताएँ
- 3.8.2 सी ई एस उत्पादन फलन की विशेषताएँ

3.9 सारांश

3.10 मुख्य शब्दावली

3.11 अपनी प्रगति जानिए के प्रश्न

3.12 अपनी प्रगति जानिए के उत्तर

3.13 अभ्यास हेतु प्रश्न

3.14 आप ये भी पढ़ सकते है

3.0 परिचय

यह इकाई उत्पादन और लागत से संबंधित है। उत्पादन सिद्धान्त में उत्पादक निर्णय लेता है कि कितना उत्पादन करना है और उत्पादन करने के लिए किन–किन साधनों की जरूरत पड़ेगी। दिए हुए श्रम और पूंजी से कितना उत्पादन हो सकता है। उत्पादन का सिद्धान्त अल्पकालीक और दीर्घकालीक हो सकता है। उत्पादन सिद्धान्त के

बाद उत्पादक को लागत की गणना करनी होती है। उत्पादन की लागत उत्पादन की मात्रा पर निर्भर करती है। लागत भी अल्पकालीन व दीर्घकालीन हो सकती है। लागत के बाद तकनीकी परिवर्तन भी बहुत महत्वपूर्ण है।

3.1 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के उद्देश्य निम्नलिखित है –

- अल्पकालीन और दीर्घकालीन उत्पादन सिद्धान्त में भेद करना
- आन्तरिक और बाहरी बचतो व हानियो का अध्ययन करना
- लागत का विश्लेषण करना
- उत्पादन फलन और तकनीकी विकास का अध्ययन करना

3.2 उत्पादन के नियम

उत्पादक वस्तुओ और सेवाओ के निर्माण के लिए आगतो जैसे की श्रम, पूंजी, भूमि और उधमशीलता का प्रयोग करता है। एक उत्पादक इन आगतों का प्रयोग करके वस्तुओ और सेवाओ का निर्माण करता है। उत्पादन एक ऐसी गतिविधि है जिससे किसी भी वस्तु या सेवाओ के मूल्य में वृद्धि होती है। उदाहरण के लिए कागज का प्रयोंग करके पुस्तक का उत्पादन किया जाता है। उत्पादन को हम आगतो के निर्गतो में रूपान्तरण के रूप में जानते है।

उत्पादन फलन

एक उत्पादक के लिए आगतो और निर्गतो के बीच एक संबंध होता है। इस संबंध को हम उत्पादन फलन के रूप मे जानते है। उत्पादन फलन आगतो और निर्गतों के बीच तकनीकी सम्बन्ध है।

$Q=f(L,K)$

Q= उत्पादन (Production)

f= फलन (function)

L= श्रम (Labour)

K= पूंजी (Capital)

उपरोक्त उत्पादन फलन में L और K आगत है। Q उत्पादन को दर्शा रहा है।

अल्पकाल और दीर्घकाल

अल्पकाल

अल्पकाल समय की वह अवधी है जिसमें केवल परिवर्तनशील साधनो को ही बदला जा सकता है। अल्पकाल में स्थिर साधन जैसे की प्लांट, मशीनरी आदि को नहीं बढाया जा सकता है। इसका अर्थ यह है उत्पादन की मात्रा को केवल परिवर्तनशील साधनो की सहायता से बढ़ाया जा सकता है, जबकि स्थिर साधनो की मदद से नहीं बढ़ाया जा सकता।

दीर्घकाल

दीर्घकाल समय की वह अवधि है जिसमें स्थिर और परिवर्तनशील दोनो साधनो को बदला जा सकता है। दीर्घकाल में उत्पादन को स्थिर और परिवर्तनशील दोनो साधनो की मदद से बढ़ाया जा सकता है। उत्पादन बढ़ाने के लिए उत्पादन की नई तकनीक अपना सकते है। दीर्घकाल में सभी आगतों में परिवर्तन कर सकते है।

अल्पकाल और दीर्घकाल मे हमे यह ध्यान देना चाहिए की ये किसी निश्चित समय से संम्बन्धित नहीं हो सकते है। जैसे की बाँध बनाने के लिए 10 साल भी अल्पकाल हो सकते है। परन्तु चावल की फसल के लिए 6 –7 महीने भी दीर्घकाल होते है।

परिवर्तनशील साधन और स्थिर साधन

परिवर्तनशील साधन

ये वे साधन होते है जिन्हे अल्पकाल में भी परिवर्तित किया जा सकता है। श्रम, बिजली, कच्चा माल इत्यादि परिवर्तनशील साधन के उदाहरण है। परिवर्तनशील साधन हमेशा उत्पादन बढ़ने के साथ बढ़ते है। शुन्य उत्पादन पर परिवर्तनशील साधन शून्य होते है।

स्थिर साधन

स्थिर साधनो से अभिप्रायः उन साधनो से है जिनको अल्पकाल पर परिवर्तित नहीं किया जा सकता है। स्थिर साधन को केवल दीर्घकाल में परिवर्तित किया जा सकता है। इनकी पहचान यह है की ये जिसने अल्पकाल में होते है उतने ही दीर्घकाल में होते है।

उत्पादन फलन के प्रकार

(1) अल्पकालीन उत्पादन फलन

(2) दीर्घकालीन उत्पादन फलन

(1) अल्पकालीन उत्पादन फलन – अल्पकालीन उत्पादन फलन केवल परिवर्तनशील साधनो का प्रभाव उत्पादन पर देखता है, जबकि स्थिर साधनों के प्रभाव का अध्ययन नहीं किया जाता है।

$Q=f(L, \overline{K})$

$\overline{K}$ = स्थिर पूंजी,

केवल श्रम परिवर्तनशील है।

(2) **दीर्घकालीन उत्पादन फलन** – दीर्घकालीन उत्पादन फलन में परिवर्तनशील साधन और स्थिर साधन दोनो के प्रभाव का अध्ययन किया जाता है।

$Q=f(L,K)$

Q= उत्पादन (Production)

f= फलन (function)

L= श्रम (Labour)

K= पूंजी (Capital)

दीर्घकालीन उत्पादन फलन में श्रम और पूंजी दोनो परिवर्तन शील है।

उत्पाद की आवधारणा

उत्पाद से अभिप्रायः एक निश्चित समय में एक फर्म द्वारा उत्पादित वस्तुओ और सेवाओ की मात्रा से है। उत्पाद तीन तरह के होते है।

(1) कुल उत्पाद

(2) सीमान्त उत्पाद

(3) औसत उत्पाद

(1) **कुल उत्पाद** – कुल उत्पाद से अभिप्राय एक निश्चित अवधी मे एक फर्म द्वारा उत्पादित कुल वस्तुओ और सेवाओ के मुल्य से है।

(2) **सीमान्त उत्पाद** – परिवर्तनशील साधन की इकाई को बढ़ाने पर कुल उत्पाद में परिवर्तन को सीमान्त उत्पाद कहते है। उदाहरण के लिए 10 श्रमिक 60 इकाइयों का उत्पादन कर रहे है। अब यदि 11 श्रमिक काम कर लगा दिए जाए और उत्पाद बढ़कर 60 इकाईयां हो जाएँ, तो 11वें श्रमिक का सीमान्त उत्पाद 60 – 50 = 10 इकाईयाँ होगा।

$MP=TPn-TPn-1$

MP= सीमान्त उत्पाद

TPn= n इकाईयां से कुल उत्पाद

TPn-1=(n-1) इकाईयां से कुल उत्पाद

औसत उत्पाद – औसत उत्पाद प्रति ईकाई परिवर्तनशील साधन का उत्पाद है। उदाहरण के लिए 10 श्रमिक 50 ईकाईयाँ का उत्पादन कर रहे है तो 1 श्रमिंक का उत्पाद 50 / 10 = 5 इकाईयाँ होगा।

$$AP=\frac{TP}{Qn}$$

AP = औसत उत्पाद

TP = कुल उत्पाद

Qn = परिवर्तनशील साधन की मात्रा

3.2.1 अल्पकाल में उत्पादन के नियम (परिवर्तनशील अनुपातो का नियम)

अल्पकाल में उत्पादन के नियम को हम परिवर्तनशील उत्पाद के नियम से भी जानते है। इस नियम को समझने के लिए हमें अल्पकालीन उत्पाद फलन और दीर्घकालीन उत्पाद फलन को समझना पड़ेगा। क्योंकि परिवर्तनशील अनुपातो का नियम अल्पकालीन उत्पाद फलन पर आधारित है। क्योंकि अल्पकाल में कुछ साधन परिवर्तनशील होते है जबकि कुछ साधन स्थिर होते है। जैसे की श्रम परिवर्तनशील है और पूंजी स्थिर साधन है। परिवर्तनशील अनुपात के नियम में श्रम जैसे परिवर्तनशील साधनो का प्रभाव उत्पादन पर देखा जाता है। उस नियम को परिवर्तनशील अनुपात का नियम इसलिए कहते है क्योंकि कोई भी उत्पादन करने के लिए स्थिर और परिवर्तनशील साधनो दोनो का एक निश्चित अनुपात में प्रयोग किया जाता है। लेकिन जब हम केवल परिवर्तनशील साधन को बढ़ाते है तो स्थिर और परिवर्तनशील साधनो का यह अनुपात भी परिवर्तनशील हो जाता है। इसलिए उसे परिवर्तनशील अनुपातो का नियम भी कहते है।

परिवर्तनशील अनुपातो के नियम की मान्यताएँ

(1) इस नियम में तकनीकी परिवर्तन को स्थिर माना गया है।

(2) यह नियम केवल अल्पकाल में लागु होता है।

(3) परिवर्तनशील साधन की सभी इकाईयाँ समरूप है।
(4) उत्पादन के साधन परिवर्तनशील अनुपातो में लगाएँ जाते है।
(5) श्रम परिवर्तनशील है।
(6) अन्य साधन जैसे की प्लांट, मशीनरी स्थिर है।
(7) परिवर्तनशील साधन की इकाई को एक – एक करके बढाया जाता है।
(8) यह नियम केवल उत्पाद के क्षेत्र में लागु होता है।

परिवर्तनशील अनुपात के नियम में परिवर्तनशील साधनो में परिवर्तन का प्रभाव उनके कुल उत्पाद, औसत उत्पाद और सीमान्त उत्पाद पर देखा जाता है। इन उत्पादो के बढ़ने, घटने या समान रहने का प्रभाव हम एक चित्र की सहायता से कर सकते है।

परिवर्तनशील अनुपात के नियम की तीन अवस्थाएँ

चित्र – 3.1

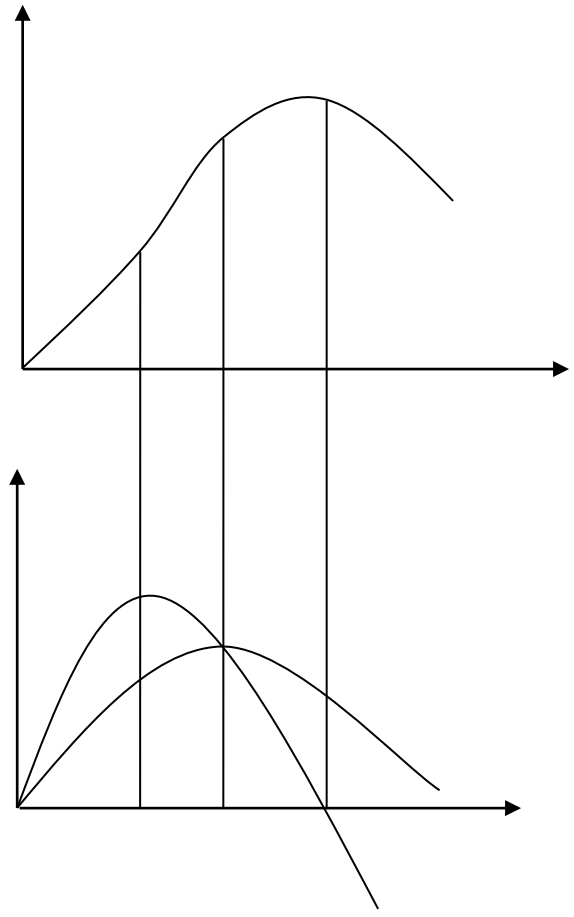

<u>प्रथम चरण</u> : बढ़ते साधन के प्रतिफलः पहले चरण को बढ़ते साधन के प्रतिफल भी कहते है। उस चरण में जब परिवर्तनशील साधन जैसे श्रम को अधिकाधिक बढ़ाया जाता है तो उनका प्रभाव कुल उत्पाद औसत उत्पाद और सीमान्त उत्पाद पर पड़ता है। पहले चरण में जब परिवर्तनशील साधनों को बढ़ाया जाता है तो कुल उत्पाद पहले बढ़ती दर से बढ़ता है और इसके बाद घटती दर से बढ़ता रहता है। औसत उत्पाद बढ़ता हुआ अधिकतम हो जाता है। सीमान्त उत्पाद पहले चरण में बढ़ता है और घटता भी है। परन्तु समीान्त उत्पाद पहले चरण में शुन्य नहीं होता है।

दूसरा चरणः– घटते साधन के प्रतिफलः दूसरे चरण को घटते प्रतिफल का नियम भी कहते है। उस चरण में जब पनिरवर्तनशील साधन जैसे श्रम का अधिकाधिक प्रयोग किया जाता है तो उसका प्रभाव कुल उत्पाद, औसत उत्पाद और सीमान्त उत्पाद पर पड़ता है। दूसरे चरण में जब परिवर्तनशील साधनो को बढाया जाता है तो कुल उत्पाद घटती दर से बढ़ता हुआ अधिकतम हो जाता है। औसत उत्पाद अधिकतम होने के बाद घटता रहता है। सीमान्त उत्पाद घटता हुआ शुन्य हो जाता है।

तीसरा चरण :– ऋणात्मक साधन के प्रतिफल : तीसरे चरण को ऋणात्मक प्रतिफल का नियम भी कहते है। इस चरण में जब परिवर्तनशील साधन की अधिक इकाइयो को प्रयोग किया जाता है तो इसका प्रभाव कुल उत्पाद, सीमान्त उत्पाद और औसत उत्पाद पर पड़ता है। तीसरे चरण में जब परिवर्तनशील साधनो को बढ़ाया जाता है तो कुल उत्पाद अधिकतम होने के बाद घटने लगता है। इस चरण में कुल उत्पाद लगातार घटता रहता है। औसत उत्पाद भी लगातार घटता रहता है। सीमान्त उत्पाद शुन्य होने के बाद ऋणात्मक हो जाता है।

तीनों चरणों मे से सबसे महत्वपूर्ण चरण दूसरा हैं। क्योंकि उत्पादक पहले चरण में उत्पादन को नहीं रोकता है। क्योंकि औसत उत्पाद बढ़ता रहता है। इसलिए उत्पादक लाभ को बढ़ाने के लिए परिवर्तनशील साधनो की इकाइयां बढ़ाता रहता है। इस प्रकार तीसरे चरण में परिवर्तनशील साधन को बढ़ाने पर कुल उत्पाद घटने लगता है। सीमान्त उत्पाद भी ऋणात्मक हो जाता है। इसलिए कोई भी विवेकशील उपभोक्ता न तो पहले चरणे मे उत्पादन करता है और न ही तीसरे चरण में उत्पादन करता है। उत्पादक दूसरे चरण में उत्पादन करता है। क्योंकि कुल उत्पाद दूसरे चरण में बढ़ता रहता है।

परिवर्तनशील अनुपात के नियम के कारण

परिवर्तनशील अनुपात के नियम के तीन चरण है। इन तीनो चरणो के अलग–अलग कारण है।

साधन के बढ़ते प्रतिफल के कारण

(1) **स्थिर साधन का उचित प्रयोग** – पहले चरण में स्थिर साधनो की मात्रा अधिक होती है और परिवर्तनशील साधन की मात्रा कम होती है। इसलिए जब परिवर्तनशील साधन की मात्रा बढ़ाई जाती है तो स्थिर साधनो को प्रयोग ज्यादा बेहतर होने लगता है। इसलिए उत्पादन बढ़ती दर से बढ़ता है। उसी कारण सीमान्त उत्पाद भी बढ़ने लगता है।

(2) **परिवर्तनशील साधन की कुशलता में वृद्धि** – पहले चरण में जब श्रम जैसे परिवर्तनशील साधन को बढ़ाते है तो श्रम का विभिष्टीकरण बढ़ने लगता है। जिस कारण कुल उत्पाद बढ़ती दर से बढ़ने लगता है। क्योंकि स्थिर साधन और परिवर्तनशील साधनो का समन्वय बेहतर होने लगता है।

(3) **स्थिर साधन की अविभाज्यता –** स्थिर साधन अविभाज्य होते है। इनका प्रयोग छोटी इकाइयो में नहीं हो सकता है। स्थिर साधन का उचित प्रयोग करने के लिए एक न्युनतम मात्रा परिवर्तनशील साधनो का प्रयोग किया जाता है। जब तक न्युनतम मात्रा परिवर्तनशील साधना की नहीं लगाई जाएगी जब तक उत्पादन नहीं बढेगा। इसलिए पहले श्ररण में साधनों की न्युनतम मात्रा पूरी हो जाती है और कुल उत्पाद बढ़ती दर से बढता रहता है और सीमान्त उत्पाद तथा औसत उत्पाद दोनो भी बढ़ते रहते है।

साधन के घटते प्रतिफल के कारण

(1) साधनो का अनुकूलतम संयोग– स्थिर साधनो और परिवर्तनशील साधनो का एक अनुकूलतम संयोग होता है। अगर अनुकूलतम संयोग से उत्पादन होता है तो उत्पादन भी अधिकतम होगा। परन्तु जब परिवर्तनशील साधनो की मात्रा बढ़ाई जाएगी तो अनुकूलम संयोग नहीं रहता है। इस प्रकार घटते प्रतिफल मिलते है।

(2) अपूर्ण स्थानापन्न – स्थिर साधन और परिवर्तनशील साधन आपस में पूर्ण स्थानापन्न नही है। किन्तु जब परिवर्तनशील साधनो को बढ़ाया जाएगा तो प्रतिफल घटते हुए मिल सकते है। क्योंकि स्थिर और परिवर्तनशील साधन आपस में पूर्ण स्थापनापन्न नहीं है।

साधन के ऋणात्मक प्रतिफल के कारण

(1) स्थिर साधन नहीं बढाए जा सकते – परिवर्तनशील साधन को बढ़ाकर बहुत ज्यादा उत्पादन नहीं बढ़ाया जा सकता है। क्योंकि कुछ साधन स्थिर होते है।

(2) परिवर्तनशील साधनो और स्थिर साधनो के बीच खराब समन्वय – जब दोनो साधनो स्थिर व परिवर्तनशील का अनुपात बिगड़ जाता है तो ये एक दूसरे को हानि पहूँचाने लग जाते है। इसलिए उत्पादन कम होने लग जाता है।

(3) परिवर्तनशील साधन की कुशलता में कमी – जब परिवर्तनशील साधनो की मात्रा बनाई जाती है तो भुरू में उत्पादन बढ़ती पर से बढ़ता है परन्तु यह एक सीमा तक ही सम्भव है। एक निश्चित अनुपात के बाद परिवर्तनशील साधन की कुशलता मे कमी आ जाती है। इसलिए उत्पादन घटने लग जाता है अर्थात ऋणात्मक प्रतिफल मिलने लगते है।

तीनो चरणो का संक्षिप्त विवरण

पहला चरण

(1) कुल उत्पादन बढती दर से भी बढ़ता है और घटती दर से भी बढ़ता है।
(2) सीमान्त उत्पादन बढ़ता भी है और घटता भी है परन्तु ऋणात्मक या शुन्य नहीं होता है।
(3) औसत उत्पाद बढ़ता हुआ अधिकतम स्तर पर पहूँच जाता है।

दूसरा चरण

(1) कुल उत्पादन घटती दर से बढ़ता हुआ अधिकतम हो जाता है।
(2) सीमान्त उत्पाद घटता हुआ शुन्य हो जाता है।
(3) औसत उत्पाद घटता रहता है। परन्तु शुन्य नहीं होता है।

तीसरा चरण

(1) कुल उत्पाद घटने लगता है।
(2) सीमान्त उत्पाद ऋणात्मक हो जाता है।
(3) औसत उत्पाद घटने लगता है परन्तु शून्य या ऋणात्मक नहीं होता है।

3.2.2 दीर्घकाल में उत्पादन के नियम

हमने अब तक एक साधन परिवर्तनशील रहते हुए और कुछ साधन स्थिर रहते हुए उत्पादक के नियम को पैमाने का प्रतिफल भी कहते है। परन्तु पैमाने के प्रतिफल का अध्ययन करने से पहले हमें दीर्घकाल में जब श्रम और पूंजी का अनुपात परिवर्तनशील रहे इसका भी अध्ययन करना चाहिए। दीर्घकाल मे उत्पादन के दो नियम पहले में श्रम और पूंजी भी परिवर्तनशील होता है और इनका अनुपात भी परिवर्तनशील होता है। इस सिद्धान्त में समोत्पाद वक्र और कीमत रेखा का अध्ययन करेंगे। दीर्घकाल के दूसरे सिद्धान्त मे श्रम और पूंजी दोनो परिवर्तनशील होते है, लेकिन इन दोनो का अनुपात स्थिर रहता है।

उत्पादन का सिद्धान्त – साधनो का परिवर्तनशील अनुपात (दीर्घकाल) – इस भाग में हम उत्पादन फलन का अध्ययन करेंगे जबकी श्रम और पूंजी दोनो साधन परिवर्तनशील होते है। परन्तु श्रम और पूंजी का अनुपात स्थिर

नहीं होता है। इस सिद्धान्त में श्रम और पूंजी आपस में स्थानापन्न होते है। श्रम और पूंजी का एक दूसरे की जगह प्रयोग किया जा सकता है। उपरोक्त सिद्धान्त में निम्नलिखित उत्पादन फलन का अध्ययन करेंगे।

Q=f(L,K)
Q= उत्पादन (Production)
f= फलन (function)
L= श्रम (Labour)
K= पूंजी (Capital)

उपरोक्त फलन में श्रम और पूंजी स्थानापन्न होते है। जब श्रम और पूंजी जब स्थानापन्न होते है तो समोत्पाद वक्र और लागत रेखा का अध्ययन करना जरूरी हो जाता है।

समोत्पाद वक्र – समोत्पाद वक्र दो शब्दो से मिलकर बनता है। सम + उत्पाद। इसका अर्थ है समोत्पाद वक्र पर उत्पादन समान रहता है। एक समोत्पाद वक्र पर उत्पादन स्थिर रहता है। परन्तु वो स्थिर उत्पादन श्रम और पूंजी को प्रतिस्थापित करके प्राप्त होता है अर्थात उत्पादन स्थिर रहता है परन्तु यह उत्पादन श्रम और पूंजी के अलग–अलग अनुपातों से प्राप्त होता है।

समोत्पाद वक्र श्रम और पूंजी के उन सभी संयोगो को दर्शाता है जिनसे की समान मात्रा में किसी वस्तु का उत्पादन होता है।

जिस प्रकार तटस्थता वक्र उपभोक्ता का अध्ययन करता है। उसी प्रकार समोत्पाद वक्र उत्पादक का अध्ययन करता है। समोत्पाद वक्र श्रम और पूंजी के संयोगो को बताता है तो तटस्थता वक्र दो वस्तुओ के संयोगो को बताता है। इसलिए समोत्पाद वक्र का अध्ययन करने से पहले तटस्थता वक्र का अध्ययन करना हमारे उस अध्याय को आसान बना देगा।

समोत्पाद वक्र की मान्यताएँ

(1) केवल एक वस्तु का उत्पादन होता है।
(2) उत्पादन के साधन जैसे श्रम और पूंजी की सभी इकाइयां समान होती है।
(3) श्रम और पूंजी आपस में प्रतिस्थापक है।
(4) उत्पादन की तकनीक में परिवर्तन नहीं हो सकता है।
(5) श्रम और पूंजी पूर्णतया विभाज्य है।

समोत्पाद वक्र का अध्ययन करने से पहले समोत्पाद तालिका का अध्ययन करना आवश्यक है।

समोत्पाद तालिका

तालिका 3.1

संयोग	श्रम की इकाइयाँ (L)	पूंजी की इकाइयाँ (K)	उत्पादन का स्तर (x)
A	1	25	50
B	2	17	50
C	3	11	50
D	4	7	50
E	5	5	50

तालिका – 3.1 श्रम और पूंजी के विभिन्न संयोगों को दर्शा, रही है। उपरोक्त तालिका में उत्पादन 100 इकाईयाँ स्थिर है। परन्तु यह उत्पादन की मात्रा श्रम और पूंजी के अलग – अलग संयोगो से प्राप्त हुई है।

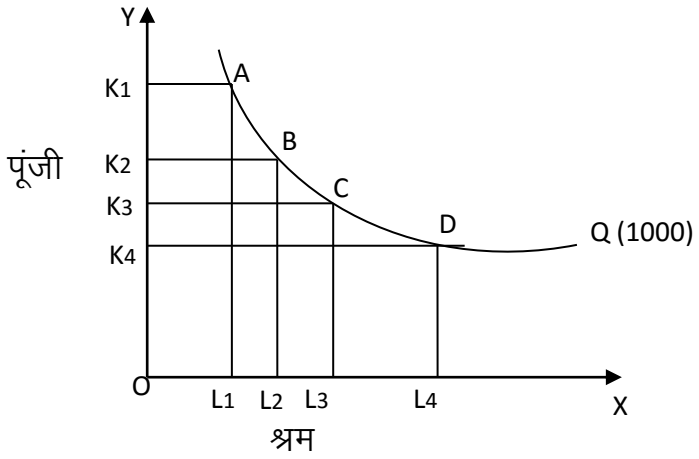

उपरोक्त चित्र – 3.2 श्रम और पूंजी के विभिन्न संयोगो।, B, C और D की व्याख्या कर रहा है। उपरोक्त उदाहरण में श्रम और पूंजी की मदद से 100 ईकाईयाँ का उत्पादन किया जा रहा है। यहाँ पर श्रम और पूंजी आपस में प्रतिस्थापक है। श्रम परिवर्तनशील साधन है। पूंजी एक स्थिर साधन है। स्थिर और परिवर्तनशील साधन का अनुपात बदलता रहता है।

समोत्पाद वक्रो का मानचित्र – समोत्पाद मानचित्र में कई सारे समोत्पाद वक्रो का समूह है। समोत्पाद मानचित्र में कई सारे समोत्पाद वक्र होते है।

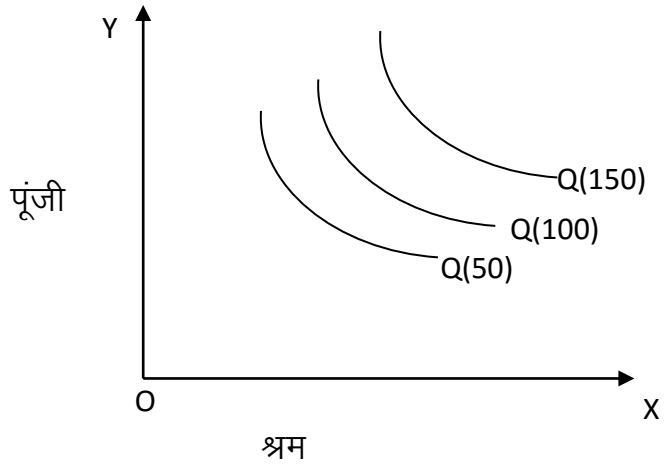

तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमान्त दर (Marginal Rate of Substitiution) MRTS -

प्रतिस्थापन्न की सीमान्त दर वह दर है जिस पर एक साधन को दूसरे साधन से प्रतिस्थापित किया जाता है और उत्पादन स्थिर रहता है। उत्पादन की मात्रा स्थिर रहती है जबकि श्रम और पूंजी का अनुपात बदलता रहता है। उत्पादक उसी समोत्पाद वक्र पर रहता है।

$$\mathbf{MRTS_{LK}} = \frac{\Delta \text{पूंजी}}{\Delta \text{श्रम}} = \frac{\text{पूंजी में परिवर्तन}}{\text{श्रम में परिवर्तन}} = \frac{\Delta K}{\Delta L}$$

$$\textbf{MRTS}_{KL} = \frac{\Delta \text{श्रम}}{\Delta \text{पूंजी}} = \frac{\text{श्रम में परिवर्तन}}{\text{पूंजी में परिवर्तन}} = \frac{\Delta L}{\Delta K}$$

MRTS (तकनीकी प्रतिस्थापन्न की सीमान्त दर)

तालिका 3.2

संयोग	श्रम	पूंजी	उत्पादन	$\textbf{MRTS}_{LK}$
A	1	25	50	
B	2	17	50	8:1
C	3	11	50	6:1
D	4	7	50	4:1
E	5	5	50	2:1

घटते तकनीकी प्रतिस्थापन्न की सीमन्त दर – इस नियम के अनुसार तकनीकी प्रतिस्थापन्न की सीमान्त दर लगातार कम होती रहती है। जैसे – जैसे श्रम की मात्रा बढ़ाई जाऐंगी वैसे – वैसे पूंजी को छोड़ने की दर कम होती रहेगी। उत्पादन मात्रा समान रहती है। उपरोक्त तालिक 3.2 से स्पष्ट है की जब श्रम की मात्रा को बढ़ाया जाता है तो MRTS लगातार कम होती रहेगी।

समोत्पाद वक्रो की विशेषताएँ –

(1) समोत्पाद वक्रो का ढ़ाल ऋणात्मक होता है – समोत्पाद वक्रो का ढ़ाल ऋणात्मक होता है। क्योंकि हम जानते है की समोत्पाद वक्रो में उत्पादन की मात्रा स्थिर रहती है। यदि समोत्पाद वक्रो का ढ़ाल धनात्मक होता तो उसका अर्थ होगा की श्रम और पूंजी की मात्रा बढ़ाई जा रही है और उत्पादन स्थिर होता है। जबकि ऐसा करना एक उत्पादक के लिए व्यर्थ होगा। समोत्पाद वक्र की ढाल ऋणात्मक होने का अर्थ है की श्रम और पूंजी की प्रतिस्थापित किया जा रहा है और उत्पादन की मात्रा स्थिर है।

चित्र – 3.4

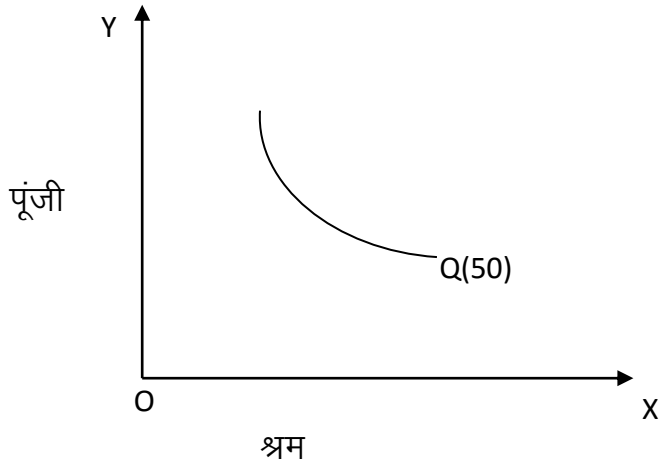

उपरोक्त चित्र से स्पष्ट है की समोत्पाद वक्र का ढाल ऋणात्मक है। उत्पादन की मात्रा स्थिर है। श्रम और पूंजी का अनुपात बदलता रहता है।

(2) समोत्पाद वक्र मूल बिन्दू की ओर उत्तल (Convex) रहते है – समोप्वाद वक्र मूल बिन्दू की ओर उतल रहते है उसका अर्थ है की प्रतिस्थापन्न की सीमान्त दर लगातार कम होती रहती है। जब श्रम की मात्रा बढ़ाई जाएंगी और पूंजी की मात्रा घटाई जाएगी तो यह दर कम होती रहेगी।

(3) समोत्पाद वक्र ऊंचा होगा तो ज्यादा उत्यादन होगा –

इसका अर्थ है की ऊंचा समोत्पाद वक्र ज्यादा उत्पादन को बताता है। नीचे का समोत्पाद वक्र कम उत्पादन को बताता है।

चित्र – 3.5 से स्पष्ट है की Q पर 50 इकाईयों का उत्पादन हो रहा है और Q1 पर 100 इकाईयों का उत्पादन हो रहा है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है की जितना ऊँचा समोत्पाद वक्र होगा वह उतना ही ज्यादा उत्पादन को दर्शायेगा।

चित्र – 3.5

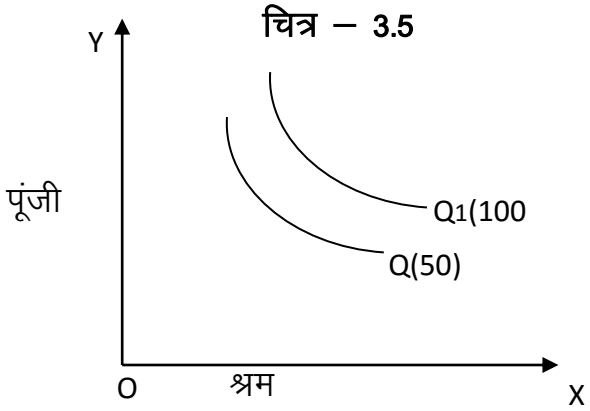

(4) दो समोत्पाद वक्र आपस में काट नहीं सकते –

दो समोत्पाद वक्र आपस में काट नहीं सकते है। क्योंकि जिस बिन्दु पर समोत्पाद वक्र काटते है उस बिन्दु पर दोनो समोत्पाद वक्र समान उत्पादन को बता रहा है। जबकि जिस बिन्दु पर वो नहीं काटते है उन पर कम या अधिक उत्पादन को बताएगें। इसलिए दो समोत्पाद वक्र आपस में काट नहीं सकते है।

उपरोक्त चित्र में समोत्पाद वक्र आपस में काट रहे है। तकनीकी रूप से समोत्पाद वक्र का काटना गलत होता है।

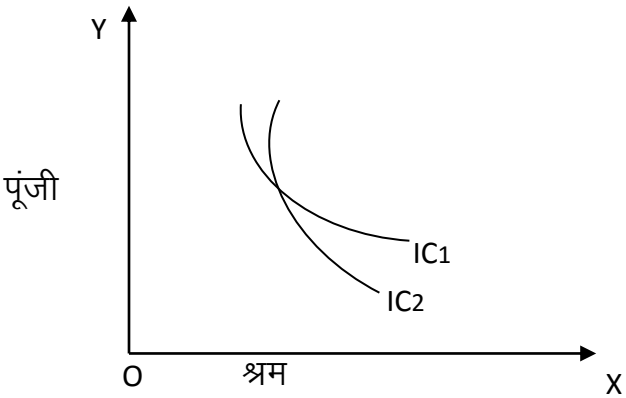

चित्र – 3.6

(5) समोत्पाद वक्र X-Axis या Y-Axis को छू नहीं सकते हैं – हम जानते है की समोत्पाद वक्र दो साधनो के संयोगो की व्याख्या करता है। अगर किसी भी अक्ष को छूता तो उसका अर्थ होगा की समोत्पाद वक्र केवल एक साधन को बता रहा है। इसलिए समोत्पाद वक्र किसी भी अक्ष को छू नहीं सकता है।

चित्र – 3.7

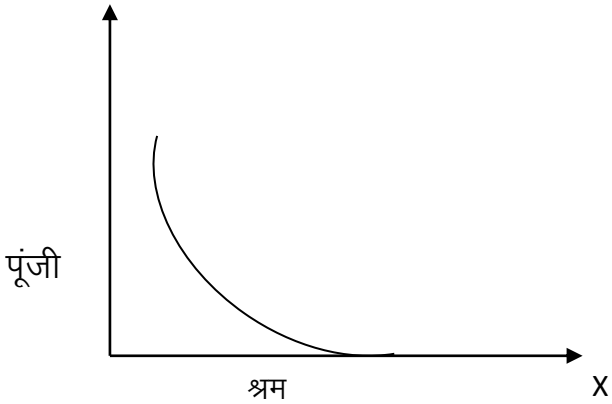

चित्र – 3.8

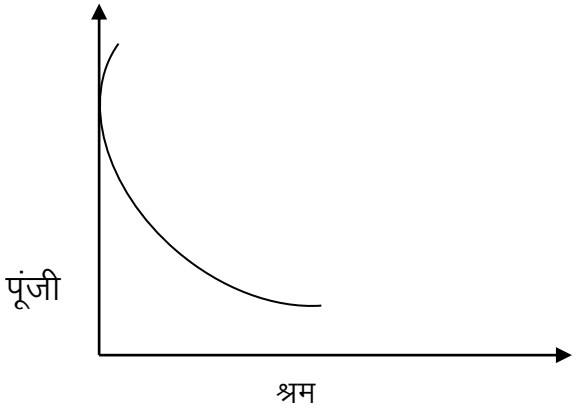

उपरोक्त दोनो चित्र तकनीकी रूप से गलत है। क्योंकि समोत्पाद वक्र किसी भी अक्ष को छू नहीं सकते है। क्योंकि समोत्पाद वक्र के छूने से केवल एक साधन का संयोग हो जाता है। जबकि समोत्पाद वक्र में दो साधनो के संयोगो को बताया जाता है।

(6) पूर्ण प्रतिस्थापक साधनो का समोत्पाद वक्र सीधी रेखा होगा

चित्र – 3.9 में समोत्पाद वक्र सीधी रेखा है। सीधी रेखा का समोत्पाद वक्र उस समय होगा जब श्रम और पूंजी दोनो साधन पूर्ण प्रतिस्थापक होंगे।

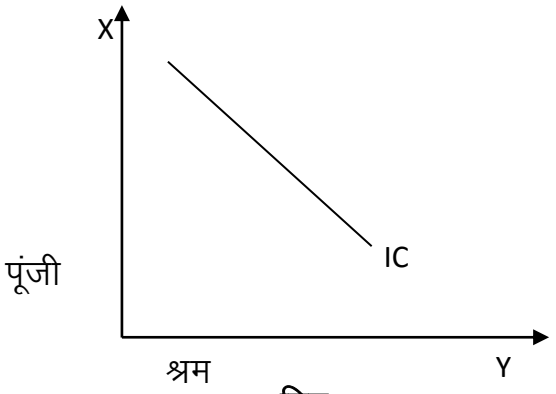

चित्र – 3.9

(7) पूरक साधनो का समोत्पाद वक्र L आकार का होगा

चित्र – 3.10 दर्शाता है की जब श्रम और पूंजी आपस में प्रतिस्थापक नहीं होते है अर्थात दोनो साधनो श्रम और पूंजी का एक निश्चित अनुपात लगाया जाता है तो समोत्पाद वक्र का आकार समकोण यानि L – आकार का हो जाता है।

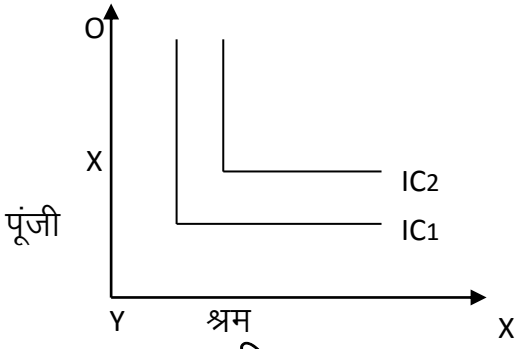

चित्र – 3.10

सम – लागत रेखा –

जिस प्रकार समोत्पाद वक्र समान उत्पादन को दर्शाता है उसी प्रकार से सम लागत रेखा समान लागत को दर्शाती है। अर्थात सम–लागत रेखा समान उत्पादन को बताती है। लागत तो समान रहती है परन्तु श्रम और पूंजी का अनुपात बदलता रहता है। उस प्रकार सम–लागत रेखा श्रम और पूंजी के उन सभी संयोगो को बताता है जिस पर लागत समान रहती है। सम – लागत रेखा को व्युतपन्न उसी प्रकार किया जाता है जैसे बजट रेखा को करते है।

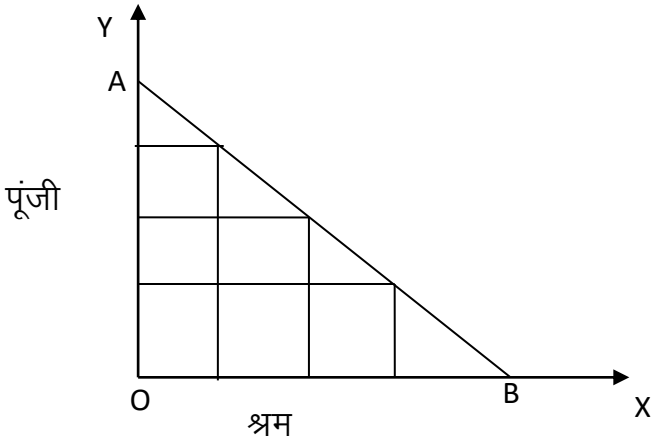

चित्र –3.11 बजट रेखा

चित्र – 3.11 उन सभी संयोगो को बता रहा है जिन पर लागत समान रहती है।

सम – लागत रेखा की ढ़लान – सम लागत रेखा की ढ़ाल दोनो साधनो की कीमत का अनुपात होता है।

सम लागत रेखा की ढ़ाल $= \frac{PL}{Px} = \frac{W}{r}$

सम लागत रेखा की ढ़ाल श्रम की कीमत और पूंजी की कीमत का अनुपात होती है। उसका हम w/r के रूप मे भी लिख सकते है। क्योंकि श्रम की कीमत उसकी मजदूरी (w) होती है और पूंजी की कीमत ब्याज की दर (r) होती है।

साधनो का अनुकूलतम संयोग (उत्पादक संतुलन) – साधनो के अनुकूलतम संयोग को कई नामो से जाना जाता है। जैसे की उत्पादक का संतुलन और साधनो का न्यूनतम लागत संयोग आदि। इसको उत्पादक का संतुलन इसलिए कहते है की उत्पादक इस संयोग पर उत्पादन करता है। बाकि के संयोग उत्पादक के लिए लाभ अधिकतम वाले संयोग नहीं होते है। उसी प्रकार साधनो के न्युनतम लागत संयोग इसलिए कहा जाता है क्योंकि साधनो की लागत उस संयोग पर न्युनतम आती है।

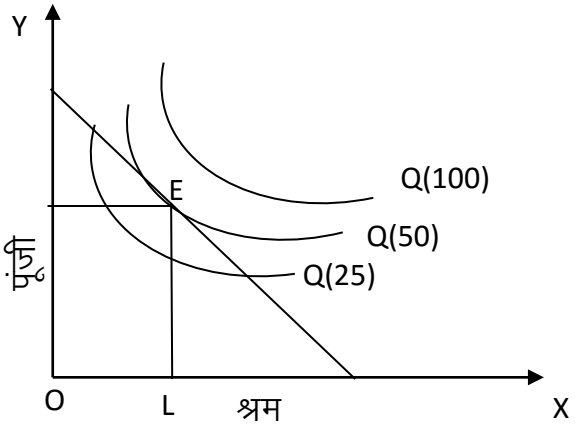

चित्र – 3.12
उत्पादक का संतलन

चित्र – 3.12 उत्पादक के संतुलन यानि साधनो के अनुकूलतम यानि न्युनतम लागत संयोग की व्याख्या कर रहा है। E बिन्दु यहां पर उत्पादक का संतुलन बता रहा है। E बिन्दु पर समोत्पाद वक्र और लागत रेखा दोनो स्पर्श कर रही है। उत्पादक के संतुलन के लिए इन दोनो का स्पर्श करना जरूरी होता है। ऊपर का समोत्पाद वक्र ज्यादा उत्पादन को बताता हैं। Q समोत्पाद वक्र पर 50 इकाइयों का उत्पादन हो रहा है और Q_1 पर 100 इकाइयो का उत्पादन हो रहा है। उत्पादक अधिकतम उत्पादन तो चाहता है किन्तु उसकी लागत या खर्चा दिया हुआ होता है। इस प्रकार उसका खर्चा इतना नहीं है इसलिए 100 इकाइयो का उत्पादन कर सके। इसलिए उत्पादक उत्पादन अधिकतम तो चाहता है लेकिन वह उस उत्पादन के लिए उतना खर्च नही कर पा रहा है। इसलिए 100 इकाईयों का उत्पादन एक उत्पादक नही कर सकता है। अब हम एक दूसरे विकल्प का विचार करते है जोकि समोत्पाद वक्र Q_O को बता रहा है। इस समोत्पाद वक्र पर 25 इकाइयों का उत्पादन हो रहा है। उत्पादक इस विकल्प का चुनाव नहीं करेगा क्योंकि इस पर कम उत्पादन हो रहा है। यहाँ पर उत्पादन की मात्रा 25 इकाईयाँ है। यहाँ पर एक दूसरी समस्या यह है की यहाँ पर समोत्पाद वक्र और लागत रेखा आपस में काट रही है। इसलिए Q_O के किसी भी बिन्दु पर संतुलन नहीं होगा। संतुलन का केवल एक ही बिन्दु है E। E बिन्दु पर संतुलन होगा।

उत्पादक संतुलन की शर्ते –

(1) समोत्पाद वक्र और लागत रेखा आपस में स्पर्श करती हो। समोत्पाद वक्र और लागत रेखा के स्पर्श करने का अर्थ है की यहाँ पर समोत्पाद वक्र और लागत रेखा का ढाल समान होता है।

समोत्पाद वक्र का ढाल MRTSLK=$\frac{MPL}{MPK}$

लागत रेखा का ढाल $= \frac{PL}{PK} = \frac{w}{r}$

इस प्रकार संतुलन बिन्दु पर

$$\frac{MPL}{MPK} = \frac{PL}{PK} = \frac{w}{r}$$

ये दोनो समान होगे। इनका अनुपात समान होगा।

(2) उत्पादक संतुलन की दूसरी शर्त यह है की जहाँ समोत्पाद वक्र और बजट रेखा आपस मे काटती हो वहाँ पर समोत्पाद वक्र केन्द्र की ओर उत्तल (Convex) हो। इसका अर्थ है की यहाँ पर समोत्पाद वक्र का ढ़ाल यानि MRTSLK लगातार कम होती रहती है।

विस्तार पथ (Expansion Path) – विस्तार पथ उन सभी उत्पादक संतुलनो के बिन्दुओ का एक बिन्दुपथ है।

चित्र – 3.13

विस्तार पथ

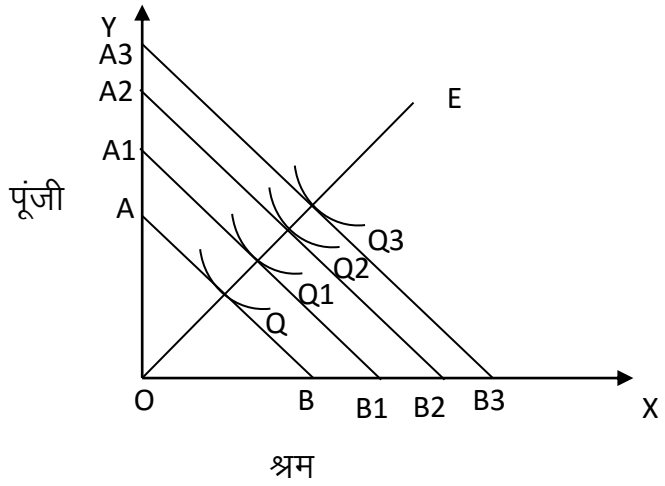

उपरोक्त चित्र – 3.13 विस्तार पथ के बारे में बता रहा है। विस्तार में उत्पादक संतुलन के सभी बिन्दुओ को मिला दिया जाता है। विस्तार पथ केवल उत्पादक संतुलन या न्युतम लागत संयोगो को बताता है।

उत्पादन का सिद्धान्त – पैमाने के प्रतिफल (दीर्घकाल)

अब तक हमने श्रम और पूंजी की परिवर्तनशील अनुपातो का अध्ययन किया है। परिवर्तनशील अनुपातो का उत्पादन पर प्रभाव हमने पिछले अध्यायों में देखा है। इस अध्याय में हम साधनो को तो परिवर्तित करते है किन्तु साधनो का अनुपात स्थिर लेते है। जिस अनुपात में श्रम की मात्रा बढ़ाई जाती है उसी अनुपात मे ही पूंजी की मात्रा बढाई जाती है। ऐसा करने से उनका अनुपात स्थिर रहता है। इसलिए उसे पैमाने के प्रतिफल नाम से जाना जाता है।

मान्यताएँ – इस नियम की निम्नलिखित मान्यताएं है :–

(1) सभी साधन परिवर्तनशील है।
(2) श्रमिक दिये हुए औजार और उपकरणो से काम करता है।
(3) तकनीक स्थिर है।
(4) बाजार मे पूर्ण प्रतियोगिता है।
(5) वस्तु मात्राओ में मापी जाती है, मुद्रा मे नही।

अल्पकालीन उत्पादन फलन में कुछ साधन स्थिर होते है और कुछ साधन परिवर्तनशील होते है। इस नियम को हम परिवर्तनशील अनुपात का नियम कहते है। इसका अध्ययन हमने पिछले अध्याय में किया है परन्तु पैमाने का प्रतिफल दीर्घकालीन उत्पादन फलन पर आधारित है। दीर्घकालीन उत्पादन फलन मे सभी साधनो अर्थात स्थिर साधनो और परिवर्तनशील साधनो को परिवर्तित कर दिया जाता है। जब सभी साधनो में समान रूप से परिवर्तन किया जाता है तो स्थिर और परिवर्तनशील साधनो का अनुपात स्थिर रहता है।

Q=f(L,K)

Q= उत्पादन (Production)

f= फलन (function)

L= श्रम (Labour)

K= पूंजी (Capital)

पैमाने के प्रतिफल को माना Q गुणा बढ़ाया जाता है तो

Q1=f(QL,QX)

यहाँ पर श्रम और पूंजी दोनो को समान अनुपात में बढ़ाया जाता है तो उत्पादन बढने के तीन तरीके हो सकते है। माना की श्रम और पूंजी को दोगुणा बढ़ाया जाता हैं उत्पादन दोगुणा से अधिक, बिल्कुल, दोगुणा, या दोगुणा से कम हो सकता है। इसको क्रमशः पैमाने के बढते प्रतिफल, स्थिर प्रतिफल और घटते प्रतिफल के नाम से जानते है।

पैमाने के बढते प्रतिफल – पैमाने के बढ़ते प्रतिफल से अभिप्रायः उस स्थिती से है जब साधनो की मात्रा मे प्रतिशत परिवर्तन की तुलना में उत्पादन की मात्रा मे प्रतिशत परिवर्तन अधिक हो। पैमाने के बढते प्रतिफल में उत्पादन में ज्यादा अनुपात में वृद्धि होती है और साधनो की मात्रा में कम अनुपात में वृद्धि होती है। इसको हम एक उदाहरण की सहायता से समझ सकते है। मान लीजिए साधनो की मात्रा को 80 प्रतिशत बढ़ाया जाता है जबकि उत्पादन में 80 प्रतिशत से ज्यादा यानि 100 प्रतिशत की वृद्धि होती है तो उसको पैमाने के बढते प्रतिफल की अवस्था कहेगे। पैमाने के बढ़ते प्रतिफल को चित्र की सहायता से भी समझ सकते है।

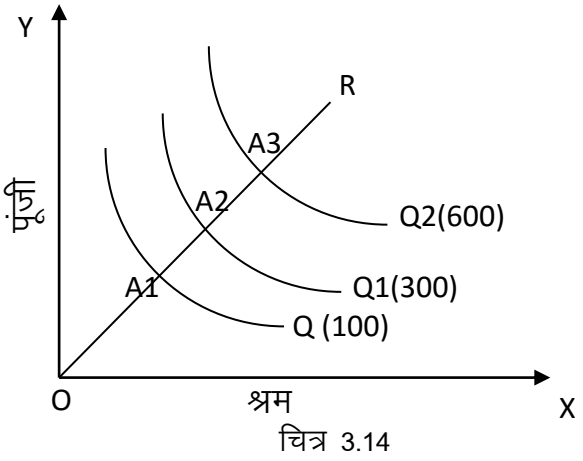

चित्र 3.14

चित्र – 3.14 से स्पष्ट है की जब श्रम और पूंजी को समान अनुपात में बढ़ाया जा रहा है तो उत्पादन उस अनुपात से अधिक अनुपात में बढ़ रहा है। उत्पादन का साधनो से अधिक अनुपात में बढ़ना पैमाने के बढ़ते प्रतिफल कहलाता है। पहले उत्पादन 100 इकाईयाँ थी। उसके बाद उत्पादन 300 व 600 इकाइयां हो जाती है। पैमाने के बढते प्रतिफल की अवस्था जब आती है तब कुछ बचते कुल हानियो से अधिक होती है।

पैमाने के समान प्रतिफल – पैमाने के प्रतिफल स्थिर जब होते है तब साधनो में जिस अनुपात में वृद्धि होती है उसी अनुपात मे उत्पादन में वृद्धि होती है अर्थात साधनो की वृद्धि दर और उत्पादन की वृद्धि दर समान होती है। जिस दर से उत्पादन बढ़ता है उसी दर से साधनो में वृद्धि होती है। मान लीजिए साधनो को दोगुना कर दिया जाएँ तो उत्पादन भी दो गुणा हो जाऐगा। उसको हम चित्र की सहायता से समझ सकते है।

चित्र – 3.15

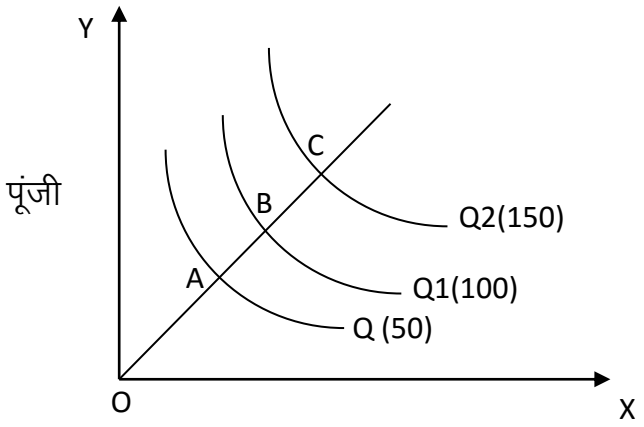

चित्र – 3.15 से स्पष्ट है की श्रम और पूंजी को जिस अनुपात में बढ़ाया जा रहा है उसी अनुपात में उत्पादन बढ़ रहा है। उत्पादन समान रूप से बढ़ रहा है। पहले उत्पादन 50 इकाईयाँ थी। यह फिर बढ़कर 100 व 150 इकाइयां हो जाता है।

पैमाने के घटते प्रतिफल – पैमाने के घटते प्रतिफल के नियम के अनुसार जिस दर से साधनो को बढ़ाया जाता है उस से कम दर से उत्पादन बढ़ता है। अर्थात उत्पादन बढ़ने की दर कम होती है। इसको हम एक उदाहरण की सहायता से भी समझ सकते है। मान लिजिए साधनो का 50 प्रतिशत बढ़ाया जाता है। इसकी वजह से उत्पादन केवल 40 प्रतिशत बढ़ता है तो उसका घटते प्रतिफल के नियम कहेंगे।

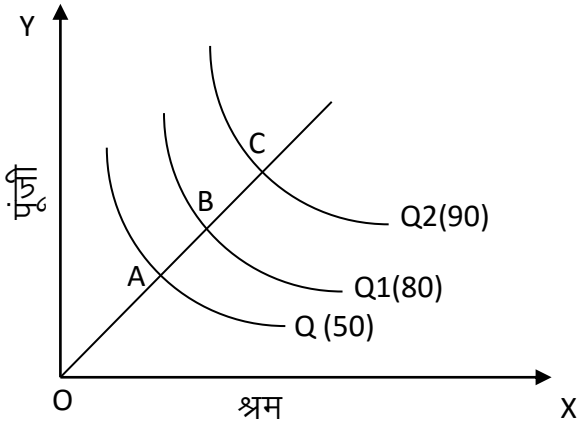

चित्र – 3.16

चित्र – 3.16 में तीन समोत्पाद वक्र है। पहले समोत्पाद वक्र में 50 इकाईयों का उत्पादन हो रहा है। परन्तु जब श्रम और पूंजी को बढ़ाया जाता है तो उत्पादन केवल 80 और 100 इकाइयाँ तक पहूँचता हैं। पैमाने के घटते प्रतिफल नियम के अनुसार पैमाने की बचते कम होती है और पैमाने की हानिया कम होती है।

पैमाने के प्रतिफल का सारांश –

पैमाने की बचते > पैमाने की हानियाँ = पैमाने के बढ़ते प्रतिफल

पैमाने की बचते = पैमाने की हानियाँ = पैमाने के घटते प्रतिफल

पैमाने की बचते < पैमाने की हानियां = पैमाने के घटते प्रतिफल

3.3 बचते व हानियाँ – जैसा की हमने पिछले अध्याय में पढ़ा है की पैमाने के बढ़ते, समान व घटते प्रतिफल का मूल कारण पैमाने की बचते व अबचते होती है। पैमाने की बचते वे होती है जब उत्पादन या फर्म के आकार बढ़ाने पर फर्म को लाभ के रूप में प्राप्त होती है। परन्तु जब पैमाने बढ़ाने पर फर्म को हानियाँ होती है तो इसको पैमाने

की हानियाँ कहते है। इसको हम उस रूप में भी समझ सकते है। जब फर्म का पैमाने बढ़ाने पर फर्म की औसत लागत घटती है तो इसे पैमाने की बचते कहते है। जब फर्म का पैमाने बढ़ाकर उत्पादन बढ़ाया जाता है और औसत लागत कम होती है तो उसे हम पैमाने की अबचते कहते है। ये दो तरह की होती है। एक तो आन्तरिक और दूसरी बाहरी।

3.31. आन्तरिक बचते व हानियाँ – आन्तरिक बचते वे बचते होती है जो उस समय प्राप्त होती है जब फर्म अपने उत्पादन का पैमाने में परिवर्तन करती है। इन बचतों को आन्तरिक इसलिए कहते है क्योंकि ये बचते फर्म के आन्तरिक सुधार के कारण होती है। ये बचते फर्म को अपने स्वयम् के निर्णय के कारण प्राप्त होती है। ये प्रबन्धन में सुधार के कारण प्राप्त हो सकती है। इसके अलावा अन्य कारण भी हो सकते है। प्रत्येक फर्म की कुछ गुप्त योजनाएँ होती है जिनका की अन्य फर्मो के साथ नहीं बाँटा जाता है। इसके परिणास्वरूप इन फर्मो को कुछ लाभ प्राप्त होते है जोकि अन्य फर्मो को प्राप्त नहीं होते है। ये लाभ फर्मो को उनके आन्तरिक संगठन के कारण प्राप्त होती है, इसलिए इनको आन्तरिक बचते प्राप्त होती है।

कुछ प्रमुख आन्तरिक बचते इस प्रकार है

(1) अविभाज्यता की बचते – जॉन रोबिन्सन साधन अविभाज्यता की बात करते है। साधन दो प्रकार के होते है एक तो स्थिर साधन और दूसरा परिवर्तनशील साधन। स्थिर साधन अविभाज्य होते है। मशीन और प्लांट जैसे स्थिर साधनो का उत्पादन के लिए एक न्युनतम आकार चाहिए ताकि उत्पादन उचित मात्रा में किया जा सके। ऐसी मशीने पर्याप्त रूप से थोड़े उत्पादन की तुलना में ज्यादा उत्पादन के लिए ज्यादा उचित रहती है। जब अविभाज्य साधन को अधिकतम क्षमता तक प्रयोग किया जाता है तो प्रति इकाई लागत कम होती रहती हैं जबकि कम प्रयोग करने पर प्रति इकाई लागत अधिक रहती है।

(2) श्रम की बचते – जब उत्पादन बढ़ता है और फर्म का पैमाना बढ़ाया जाता है तो श्रम की इकाइयां भी बढ़ाई जाती है। फर्म का आकार बढ़ने से श्रम विभाजन भी बढता है। प्रत्येक श्रमिक को कई काम की बजाय कोई एक काम सौंप दिया जाता है। जिससे श्रमिको की दक्षता में वृद्धि हो जाती है और श्रमिक अधिक कुशल हो जाते है। जब श्रमिक अधिक कुशल हो जाता है तो उत्पादन की मात्रा बढ़ जाती है। इसलिए पैमाना बढ़ने से श्रम की बचते प्राप्त होती है और जिसके कारण उत्पादन की मात्रा बढ़ जाती है।

(3) तकनीकी बचते – फर्म का पैमाना बढ़ने के कारण उसको तकनीकी बचते प्राप्त होती है। फर्म को मैनेजर, मशीनो, प्लाट के कुशल प्रयोग और माप में वृद्धि के कारण बचते प्राप्त होती है। छोटी फर्मे इन तकनीकी बचतो को प्राप्त नहीं कर सकती है। जिस कारण फर्म अपनी प्रति इकाई लागत को कम नहीं कर सकती है। इस प्रकार तकनीकी बचते केवल बढ़ी फर्म को ही प्राप्त होती है।

(4) क्रय विक्रय की बचते – क्रय विक्रय बचते वे होती है जोकि फर्म को उस समय प्राप्त होती है जब फर्म को कुछ खरीदना होता है तो वह थोक में खरीदती है और बेचती है तो ज्यादा कीमत पर बेचती है। अपने तैयार मॉल को अच्छी पैंकिंग में बेच सकती है और विज्ञापन पर भी ज्यादा खर्च कर सकती है। जिन फर्मो का छोटा आकार होता है वो फर्मे विज्ञापन पर ज्यादा व्यय नहीं कर सकती है।

इस प्रकार खरीदने व बेचने में फर्म की सौदा – भक्ति बढ़ जाती है।

(5) <u>प्रबन्धकीय बचते</u> – जितना फर्म का पैमाना ज्यादा होता है उसमें विभागो की संख्या उतनी ही अधिक होती है। इस प्रकार फर्मे प्रत्येक विभाग के लिए अलग से विशेषज्ञ नियुक्त कर सकती है। छोटी फर्मों में अलग से विशेषज्ञ नियुक्त नहीं हो सकते है। इस प्रकार प्रत्येक विभाग के अलग से होने से उत्पादन बढ़ता है।

(6) अनुसंधान की बचते – बड़ी फर्म के पास छोटी फर्म की तुलना में अधिक संसाधन होते हैं बड़ी फर्म अपनी स्वयम् की अनुसंधान प्रयोगशाला स्थापित कर सकती है। इस प्रकार बड़ी फर्म नए उपाय और नई तकनीक की खोज कर सकती है। जोकि उत्पादन बढ़ाने और लागत घटाने में काम आती है।

(7) कल्याणकारी योजनाओ की बचते – सभी फर्मो को सामाजिक कल्याण की योजनाएँ चलानी होती है। छोटी फर्मो के पास संसाधन कम होते है, इसलिए छोटी फर्मो को अधिक खर्च करना पड़ता हैं जबकि बड़ी फर्मो के पास अधिक संसाधन होते है। वह फर्म के परिसर में आर्थिक सहायता प्राप्त कैन्टीन चला सकती है, शिशुओ के लिए बालगृह आदि प्रदान कर सकती है। वह श्रमिको को मकान, शिक्षा एवम् चिकित्सा सुविधाएं भी प्रदान कर सकती है।

आन्तरिक हानियाँ – जब एक फर्म इष्टतम स्तर से आगे बढती है तो अन्य समस्याओ का जन्म होता है। जो हमने पिछले अध्याय में पढ़ी थी वो अब हमे हानियों के रूप में मिलने लगती है। इनमें से कुछ निम्न प्रकार से है।

(1) श्रम अबचते – पैमाने बढ़ने पर कुशल श्रम की कमी पैदा हो जाती है फर्म कुशल मजदूरो को साथ कम कुशल मजदूरो को लगाना शुरू कर देते है। जिसके कारण श्रमिको की उत्पादकतो गिरने लगती है। कुछ समय बाद श्रमिक अपना संघ भी बना लेते है। जिसके कारण प्रति इकाई लागत बढ़ने लगती है और उत्पादन में रूकावटे पैदा होने लगती है।

(2) प्रबन्धकीय अकुशलता – जब फर्म का पैमाना अधिक बढ़ने लगता है तो प्रबन्धक उस पर नियंत्रण रखने में असफल हो जाते है। जिसके कारण प्रबन्ध और संगठन मे समस्याएँ उत्पन्न होने लग जाती है। श्रमिको की निगरानी अकुशल हो जाती है। मजदूरो में निजी सम्पर्क कठिन हो जाता है। विभिन्न विभागो में तालमेल करने में समस्याएँ पैदा होने लगती है।

(3) तकनीकी अबचते – फर्म को पैमाना बढ़ाने के कारण विभिन्न रूकावटो का सामना करना, पड़ता है जिसके कारण फर्म नई तकनीक को लागु नहीं कर सकती है। इसको लागु करवाने में विभिन्न कठिनाइयां उठानी पड़ती है।

(4) वित्तीय अबचते – जब फर्म अपने उत्पादन का पैमाना बढ़ाती है तो नए प्लांट, मशीनरी आदि के खर्चे के लिए वित्त जुटाने में कठिनाई होने लगती है। ब्याज की लागतों में भी तेजी से वृद्धि होती है। जिससे की नए निवेश पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

(5) विपणन की अबचते – जब कर्म का आकार एक समय के बाद अधिक बढ़ता है तो क्रय–विक्रय की समस्याएँ बढने लगती है। लम्बे समय में लोगो की रूचियो में भी परिवर्तन होता है और कच्चे माल की भी पर्याप्त मात्रा मिलने में परेशानी उठानी पड़ती हैं विज्ञापन पर खर्च से घटते हुए प्रतिफल मिलने लगते है।

(6) जोखिम उठाने की अबचते – जब फर्म का आकार बढ़ता है तो जोखिम भी बढ़ता रहता है। प्रबंधन की किसी भी छोटी गलती से उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ जाता है। जिससे की फर्म को अधिक हानि उठानी पड़ती है।

3.3.2 बाहरी बचते व हानियाँ

बाहरी बचते – बाहरी बचते फर्म को तकनीकी परस्पर निर्भरता द्वारा प्राप्त होती है। केरनक्रॉस के अनुसार ''बाहरी बचते वे बचते है जो बहुत सी फर्मो और उद्योगो को इकठ्ठे प्राप्त होती है, जब एक उद्योग या उद्योगो के किसी वर्ग के द्वारा उत्पादन के पैमाने का विस्तार किया जाता है।'' उनमें से कुछ इस प्रकार है।

(1) केन्द्रीयकरण के कारण बचते – जब उद्योग का विस्तार होता है तो एक स्थान पर अधिक उत्पादन इकाईयां स्थापित होती चली जाती हैं। उद्योगो के केन्द्रीयकरण के कारण एक ही स्थान पर प्रशिक्षित श्रम, कच्चा माल, परिवहन आदि की सुविधाएँ – मिलने लगती है। प्रत्येक फर्म कम लागत में काम करने लग जाती है।

(2) सूचना सम्बन्धी बचते – अधिक फर्मे आने के कारण फर्मो का संगठन बनने लग जाता है। जिसके कारण सूचनाओ का आदान – प्रदान ज्यादा होता है। जिससे की समस्याओ का समाधान आसानी से निकलने लग जाता है।

(3) विघटन सम्बन्धी बचते – यदि एक उद्योग अधिक फैल जाता है तो उद्योगो के संगठन बनने लग जाते है। जिससे की प्रत्येक प्रक्रिया के लिए अलग से फर्म बनने लग जाती है।

बाहरी हानियाँ

जब उद्योग के उत्पादन को एक सीमा से आगे बढ़ाया जाता है तो फर्मो को हानियाँ उठानी पड़ती है। जब एक फर्म अधिक फैलती है तो अधिक श्रम, कच्चे माल, वित्त आदि की आवश्यकता पड़ती है परन्तु ये साधन अधिक मात्रा में नहीं मिलते है। दक्ष श्रम की मात्रा अधिक मात्रा नहीं मिल पाती है।

3.4 लागत

परम्परावादी अर्थशास्त्रियों के अनुसार एक उत्पादक का मुख्य उद्देश्य लाभ को अधिकतम करने का होता है। लाभ अधिकतम उस स्थिति में होता है जब लागत न्युनतम हो और आगम अधिकतम हो। किसी वस्तु का उत्पादन करने के लिए एक उत्पादक को काफी सारे खर्चे वहन करने पड़ते है इन सभी खर्चो को अर्थशास्त्र में लागत कहते है।

लागत का अर्थ

किसी वस्तु का उत्पादन करने के लिए जो सारे खर्च उठाए जाते है उनको लागत कहते है। लागत स्पष्ट व अस्पष्ट लागतों का योग होता है।

1. स्पष्ट लागत

स्पष्ट लागते वे मौद्रिक व्यय होते है जोकि बाहरी साधनों को भुगतान किए जाते है। उदाहरण के लिए पूंजी का ब्याज, कर्मचारी की सैलरी आदि स्पष्ट लागतों के उदाहरण है।

2. अस्पष्ट लागत – फर्म के मालिकों द्वारा भी साधनों की पूर्ति की जा सकती है। ये आगत या साधनों पर मौद्रिक व्यय नहीं किया जाता है। इसमें भूमि, पूंजी, श्रम और उद्यमशीलता स्वयंम् मालिक के साधन हो सकते है। मालिक द्वारा स्वंयम आपूर्ति किए गए साधनों की लागत को अस्पष्ट लागत कहते है। अस्पष्ट लागत केवल अनुमानित लागत होती है। इसको मापने के लिए किसी भी साधन का बाजार मूल्य से अनुमान लगाया जाता है।

लागत फलन

लागत फलन उत्पादन और लागत के बीच सम्बन्ध को बताता है। लागत फलन लागत और उत्पादन में फलनात्मक सम्बन्ध को दर्शाता है। इसको निम्न प्रकार से दर्शा सकते हैं।

$C=f(Q)$

Q= उत्पादन (Production)

f= फलन (function)

C= लागत (Cost)

अवसर लागत

अवसर लागत त्यागे गए सर्वश्रेष्ठ विकल्प का मूल्य होता है। इसको एक उदाहरण की सहायता में समझ सकते है। माना कि एक किसान या तो 50 क्विंटल गेंहू का उत्पादन कर सकता है, या 60 क्विंटल चावल का उत्पादन कर सकता हैं। परन्तु इन दोनों में से एक का चुनाव करना पड़ेगा। एक का चुनाव करने पर दुसरे को छोड़ना पड़ेगा। इस प्रकार जो विकल्प छोड़ा जा रहा है, वह अवसर लागत होगी। माना की हम चावल का उत्पादन कर रहे है तो गेंहू का उत्पादन नहीं कर पाएँगे। इस प्रकार चावल का उत्पादन करने की अवसर लागत गेहूं का उत्पादन होगा।

अल्पकालीन लागते – साधन दो प्रकार के होते है, कुछ स्थिर साधन और कुछ परिवर्तनशील साधन। अल्पकाल में कुछ स्थिर साधन होते है और कुछ परिवर्तनशील साधन होते है। अल्पकाल में उत्पादन केवल परिवर्तनशील साधनों की सहायता से बढ़ाया जा सकता है। इस प्रकार अल्पकाल में लागते भी दो प्रकार की होती है। एक तो स्थिर लागत और दूसरी परिवर्तनशील लागत। इस अध्याय में हम केवल अल्पकालीन लागतों का ही अध्ययन करेंगे।

स्थिर लागत – ये वे लागते होती है जिनका उत्पादन के साथ कोई सम्बन्ध नहीं होता है। ये लागत उत्पादन के शून्य स्तर पर भी उत्पादक को उठानी पड़ती है जैसे कि बिजली का बिल ईमारत का किराया आदि। स्थिर लागत को तालिका की सहायता से भी दिखाया जा सकता है।

तलिका 3.3

उत्पादन (इकाई)	कुल स्थिर लागत (TFC)
0	40
1	40
2	40
3	40
4	40

तालिका 3.3 से स्पष्ट है कि शून्य उत्पादन पर भी 40 रुपये की लागत है और उत्पादन के बढ़ने पर भी स्थिर लागते 40 रुपये ही है। इस प्रकार स्थिर लागत न तो कम होती है और न ही बढ़ती है।

रेखाचित्र – 3.17

स्थिर लागत

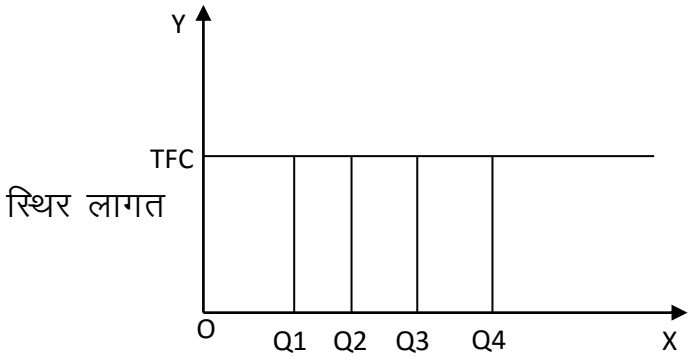

रेखाचित्र 3.17 में X - अक्ष पर उत्पादन है और Y - अक्ष पर स्थिर लागत है। रेखाचित्र 3.17 से स्पष्ट है कि उत्पादन बढ़ने के साथ स्थिर लागतों में कोई परिवर्तन नहीं होता है।

परिवर्तनशील लागत

परिवर्तनशील लागते वो लागते है जो उत्पादन के साथ प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी होती है। उत्पादन बढ़ने पर लागत बढ़ती है और उत्पादन कम होने पर परिवर्तनशील लागते कम होती रहती है। उत्पादन के शून्य स्तर के साथ परिवर्तनशील लागत शून्य होती है। इसको तालिका की सहायता से समझ सकते हैं।

तलिका 3.4

उत्पादन (इकाई)	कुल स्थिर लागत (TVC)
0	0
1	7
2	11
3	16
4	25
5	36
6	50

तालिका 3.4 उत्पादन और परिवर्तनशील लागत का सम्बन्ध बता रही है। जैसे–जैसे उत्पादन बढ़ रहा है वैसे–वैसे परिवर्तनशील लागते भी बढ़ रही है। ये शून्य स्तर पर शून्य होती है।

रेखाचित्र 3.18 परिवर्तनशील लागतों को दर्शा रहा है। यह दर्शा रहा है कि शुरू में परिवर्तनशील लागत शून्य होती है जबकि उत्पादन भी शून्य होता है। परन्तु उत्पादन बढ़ने के साथ ये बढ़ने लगती है। शुरू में घटती दर से बढ़ती है और बाद में बढ़ती दर से बढ़ती है। यह परिवर्तन उत्पादन के घटते प्रतिफल के नियम के कारण होता है।

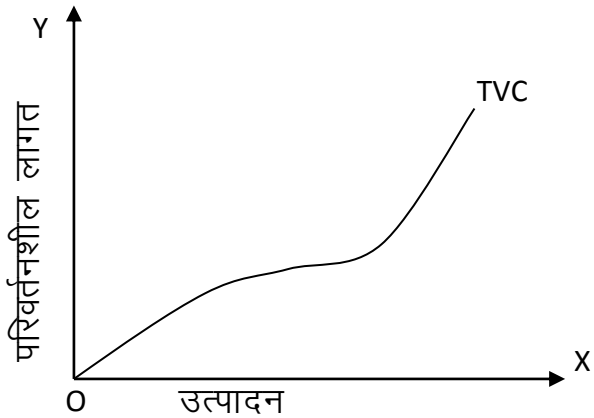

रेखाचित्र – 3.18

कुल लागत – कुल लागत परिवर्तनशील लागत व स्थिर लागत का योग होता है। उत्पादन के विभिन्न स्तरों पर स्थिर लागत और परिवर्तनशील लागतों का योग होता है।

तालिका 3.5

कुल लागत

उत्पादन (ईकाइयाँ) Q	कुल स्थिर लागत TFC	कुल परिवर्तनशील लागत TVC	कुल लागत TC=TFC+TVC
0	40	0	40
1	40	7	47
2	40	11	51
3	40	16	56
4	40	25	65

तालिका 3.5 से स्पष्ट है कि कुल लागत, कुल स्थिर लागत और कुल परिवर्तनशील लागत का योग होता है। तालिका 3.5 से स्पष्ट है कि कुल लागत कभी भी शून्य से शुरू नहीं होती है क्योंकि कुल लागत में कुल स्थिर लागत भी शामिल होती है जोकि कभी भी शुन्य नहीं हो सकती है। उसको हम रेखाचित्र की सहायता से भी समझ सकते है।

रेखाचित्र 3.19 से स्पष्ट है कि TFC और TVC का योग TC होता है। TVC शून्य से आरम्भ होता है। परन्तु TC, TFC के ऊपर से शुरू होता है। और TC वक्र TVC वक्र एक दूसरे के सामान्तर होते हैं, क्योंकि उनके बीच का अन्तर कुल स्थिर लागत होता है। TC और TVC वक्र उल्टे S आकार के होते है। ये दोनों प्रारम्भ में घटती दर से बढ़ती है और बाद में बढ़ती दर से बढ़ती है।

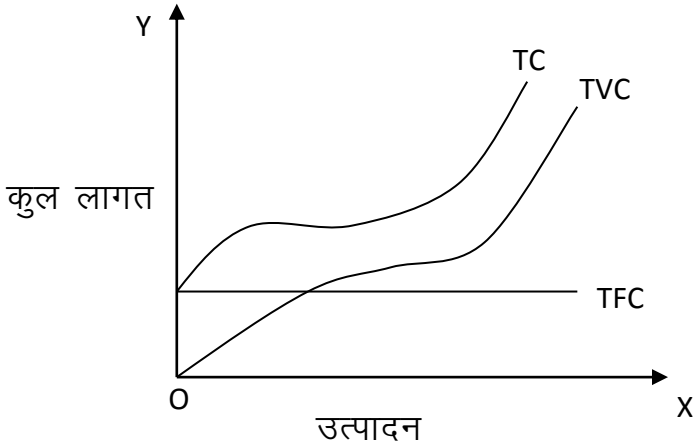

औसत लागत –प्रति इकाई उत्पादन लागत को औसत लागत कहते है। औसत लागत औसत परिवर्तनशील लागत और औसत स्थिर लागत का योग होता है। औसत लागत तीन प्रकार की होती है – 1. औसत स्थिर लागत 2. औसत परिवर्तनशील लागत 3. औसत कुल लागत

औसत स्थिर लागत –प्रति इकाई स्थिर लागत को औसत स्थिर लागत कहते है। इसे TFC को कुल उत्पादन से भाग देकर प्राप्त किया जाता है।

$$AFC = \frac{TFC}{Q}$$

AFC = औसत स्थिर लागत

TFC = कुल स्थिर लागत

Q = उत्पादन की मात्रा

हमें ज्ञात है कि जब अंश स्थिर रहे और हर बढ़ता रहे तो औसत मूल्य घटता रहता है। इसलिए औसत स्थिर लागत उत्पादन बढ़ने के साथ घटती रहती है।

तालिका 3.6

औसत स्थिर लागत

उत्पादन (ईकाई)	कुल स्थिर लागत (TVC)	औसत स्थिर लागत
0	60	–
1	60	60 / 1 =60
2	60	60 / 2 =30
3	60	60 / 3 =20
4	60	60 / 4 =15

तालिका 3.6 से ज्ञात है कि उत्पादन बढ़ने के साथ औसत स्थिर लागत कम होती है क्योंकि कुल स्थिर लागत स्थिर होती है और उत्पादन बढ़ता रहता है। इसको हम वक्र की सहायता से भी समझ सकते है।

चित्र 3.20 से स्पष्ट है कि औसत स्थिर लागत उत्पादन बढ़ने के साथ घटती रहती है। AFC वक्र आयाताकार अतिपरवलय होता है क्योंकि इसके नीचे आने वाले क्षेत्रफल हर जगह एक जैसा होता है। परन्तु AFC किसी भी अक्ष को छू नहीं सकता है क्योंकि AFC आगत X अक्ष को छू जाए तो उसका अर्थ होगा कि औसत स्थिर लागत शून्य हो जाती है जोकि सम्भव नहीं है।

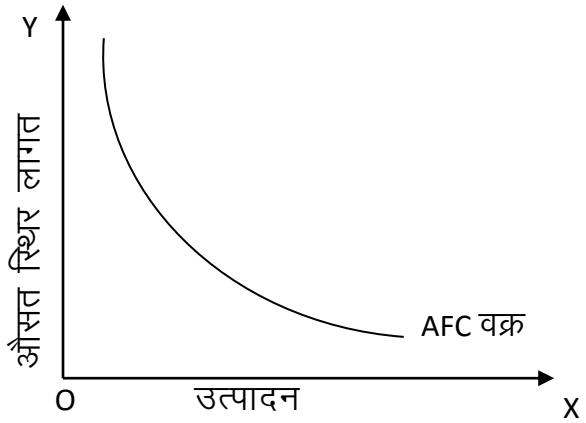

रेखाचित्र – 3.20

औसत परिवर्तनशील लागत –औसत परिवर्तनशील लागत से अभिप्राय प्रति इकाई उत्पादन की परिवर्तनशील लागत से होता है।

$$AVC=\frac{TVC}{Q}$$

इसको हम एक तालिका की सहायता से समझ सकते है।

तालिका 3.7

उत्पादन (इकाईयां)	कुल परिवर्तनशील लागत (TVC)	औसत परिवर्तनशील लागत (AVC)
0	0	–
1	20	20
2	38	19
3	54	18
4	64	16

तालिका 3.7 से स्पष्ट है कि औसत स्थिर लागत आरम्भिक अवस्था में कम होती है और फिर बढने लग जाती है।

रेखाचित्र 3.21 से हमे ज्ञात है कि जब उत्पादन में आरम्भिक वृद्धि होती है तो।VC गिरने लगती है परन्तु जब उत्पादन को और अधिक बढाया जाता है तो यह न्यूनतम होते हुए बढने लगती है।

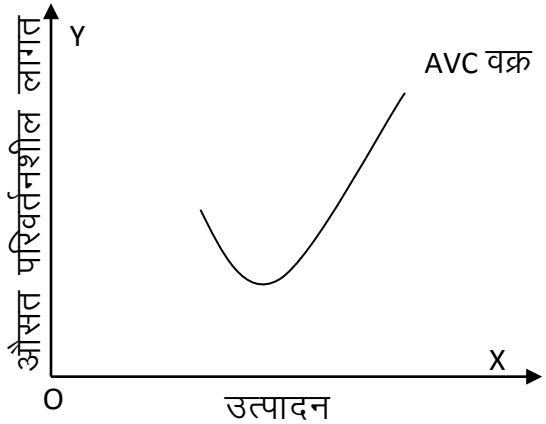

रेखाचित्र – 3.21

औसत कुल लागत या औसत लागत – औसत लागत से अभिप्राय प्रति इकाई उत्पादन लागत से होता है। औसत लागत की गणना के लिए कुल लागत को उत्पादन की मात्रा से विभाजित किया जाता है।

$AC = \frac{TC}{Q}$

AC= औसत लागत

TC= कुल लागत

Q= उत्पादन

$AC = \frac{TC}{Q} = \frac{TFC+TVC}{Q}$

$= \frac{TFC}{Q} + \frac{TVC}{Q} = AFC + AVC$

AC=AFC+AVC

इस प्रकार औसत लागत, औसत स्थिर लागत और औसत परिवर्तनशील लागत का योग होता है। इसको रेखाचित्र 3.22 की मद्द से समझा सकते है।

रेखाचित्र – 3.22

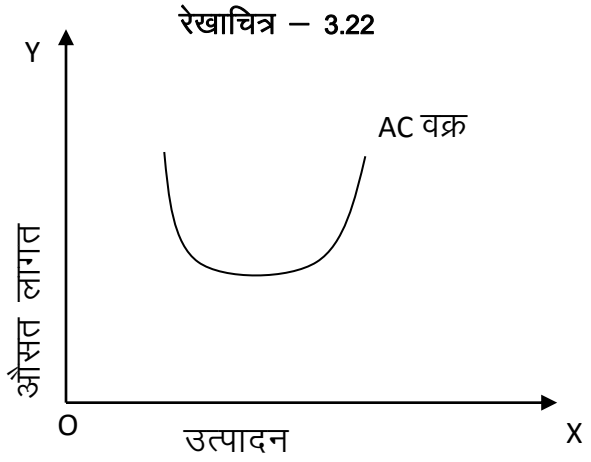

औसत लागत वक्र U आकार का होता है। आरम्भ में औसत लागत कम होती है और फिर बढने लगती है।

सीमान्त लागत – उत्पादन की एक अतिरिक्त इकाई का उत्पादन करने के लिए कुल लागत में होने वाले परिवर्तन को सीमान्त लागत कहते है। मान लिजिए 5 इकाईयों को बनाने के लिए 50 रूपये लगते है और 6 इकाईयों को बनाने के लिए 55 रूपये लगते है तो छठी इकाई बनाने की लागत 5 रूपये होगी। यह अतिरिक्त इकाई का उत्पादन करने की लागत सीमान्त लागत कहलाती है।

MCn=TCn-TCn-1

MCn= nवी इकाई की सीमान्त लागत

TCn= n इकाईयों की कुल लागत

TCn-1= n-1 इकाईयों की कुल लागत

रेखाचित्र 3.23 से स्पष्ट है कि सीमान्त लागत आरम्भ में कम होती है फिर एक उत्पादन के स्तर पर न्यूनतम हो जाती है और इसके बाद सीमान्त लागत बढने लग जाती है।

रेखाचित्र 3.23

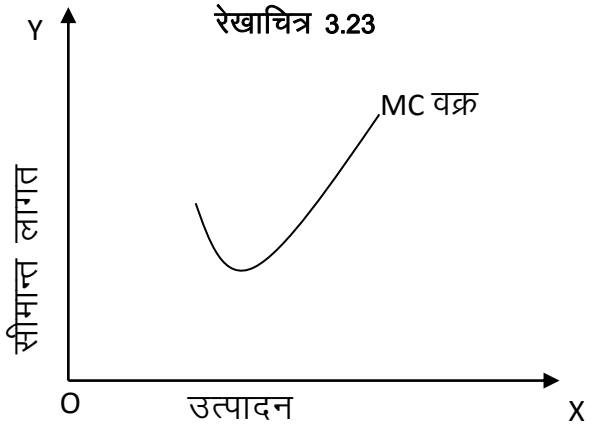

औसत और सीमान्त लागत में समन्वय –

1. जब AC कम होती है तो MC उससे ज्यादा दर से कम होती है।
2. जब AC न्यूनतम होती है तो MC, AC को नीचे से काटती है।
3. जब AC बढता है तो MC ज्यादा दर से बढती है।

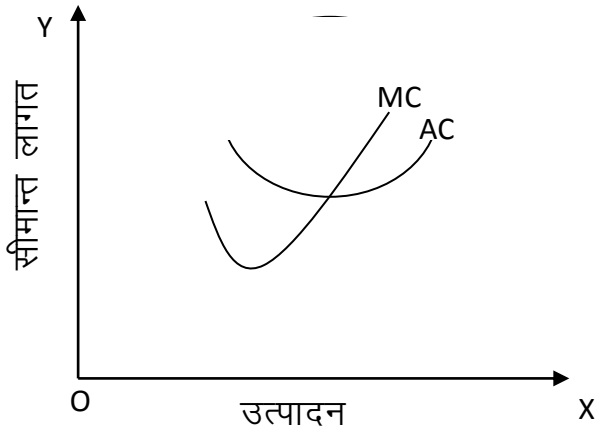

रेखाचित्र 3.24 औसम और सीमान्त लागत में समन्वय

3.4.2 दीर्घकाल में लागत व लागत वक्र – परम्परावादी – अल्पकाल में कुछ साधन स्थिर होते है और कुछ साधन परिवर्तनशील होते है लेकिन दीर्धकाल में कोई भी साधन स्थिर नही होते है। दीर्घकाल में सभी साधन परिवर्तनशील होते है। सभी साधनों में परिवर्तन किया जा सकता है।

रेखाचित्र – 3.25 मे अल्पकालीन औसत लागत वक्र को SAC से दिखाया गया है। सभी SAC को मिलाकर दीर्घकालीन औसत लागत वक्र (LAC) तैयार किया जाता है।

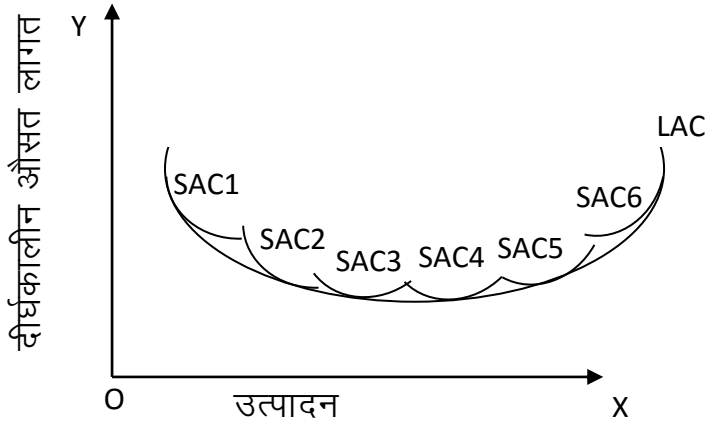

दीर्घकालीन कुल लागत वक्र (LAC) –

दीर्घकालीन कुल लागत वक्र शून्य से शुरू होता है। शून्य उत्पादन पर कुल लागत शून्य होती है।

रेखाचित्र – 3.26

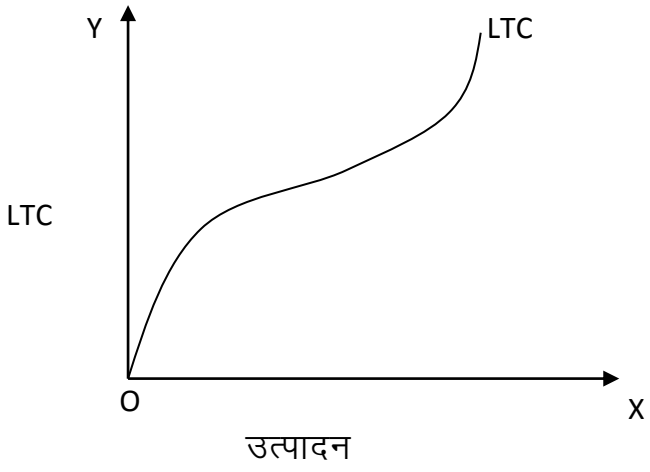

अल्पकालीन लागत वक्र शून्य लागत से शुरू नही होता है जबकि दीर्घकालीन लागत वक्र शून्य से शुरू होता है।

3.5 बहुउत्पाद फर्म का अनुकूलतम आगत संयोग – बहुउत्पाद फर्म एक से ज्यादा उत्पादों का उत्पादन करती है। फर्म का संतुलन वहां होता है जब कोई फर्म जिन दो वस्तुओं का उत्पाद कर रही है उनके उत्पादन और बिक्री में कोई भी परिवर्तन ना करे। बहुउत्पाद फर्म के संतुलन की यह शर्त है कि फर्म के उत्पादन सम्भावना वक्र और आगम वक्र जहां आपस में स्पर्श करते है वहां पर फर्म का संतुलन होता है।

संतुलन की शर्त

$$\text{MRTXY} = \frac{Px}{Py}$$

यहां पर MRTXY उत्पादन सम्भावना वक्र का ढलान है और $\frac{Px}{Py}$ आगम वक्र का ढलान है। इसे चित्र की सहायता से भी समझा सकते है।

रेखाचित्र 3.27 में X_1Y_1, X_2Y_2, X_3Y_3 आगम वक्र है। इनका ढलान दो वस्तुओं की कीमतों ाक अनुपात होता है जबकि AB फर्म का उत्पादन सम्भावना वक्र होता है। उत्पादन सम्भावना वक्र की ढलान को रूपान्तरण की सीमान्त दर (MRT) कहते है। C बिन्दू पर उत्पादन सम्भावना वक्र की ढलान और आगम वक्र की ढलान दोनो बराबर है। इसलिए फर्म का संतुलन C बिन्दु पर होगा। यहां पर X वस्तु का OD उत्पादन हो रहा है। और Y वस्तु का OE उत्पादन हो रहा है।

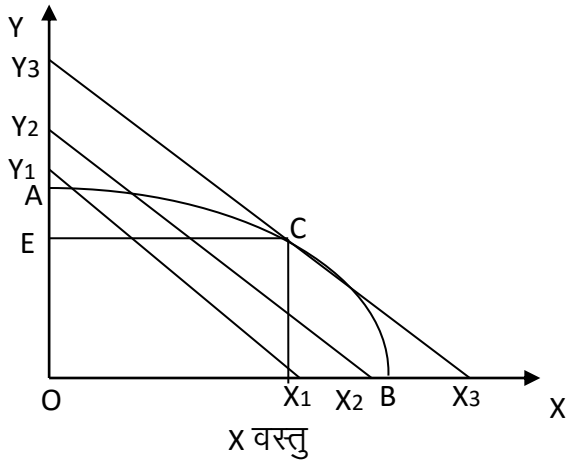

रेखाचित्र – 3.27

तकनीकी परिवर्तन और हिक्स का उत्पादन फलन की अवधारणा – प्रो0 हिक्स ने तकनीकी परिवर्तन को तटस्थ तकनीक, श्रम बचतकारी और पूंजी – बचतकारी की श्रेणियों में विभेदीकृत किया है। हिक्स का तकनीकी परिवर्तन MRTS और श्रम व पूजी की कीमतों के अनुपात पर निर्भर करती है।

1. **तटस्थ तकनीकी परिवर्तन –** हिक्स ने तकनीकी परिवर्तन को तटस्थ तब कहा है जब स्थिर पूंजी – श्रम अनुपात पर MRTSLK भी स्थिर रहता है। इसे रेखाचित्र की सहायता से दिखाया जा सकता है।

रेखाचित्र में दिए हुए श्रम – पूंजी के अनुपात पर उत्पादन बढने पर MRTSLK **समान रहती है। इसलिए यह तटस्थ तकनीकी परिवर्तन है।**

रेखाचित्र – 3.28

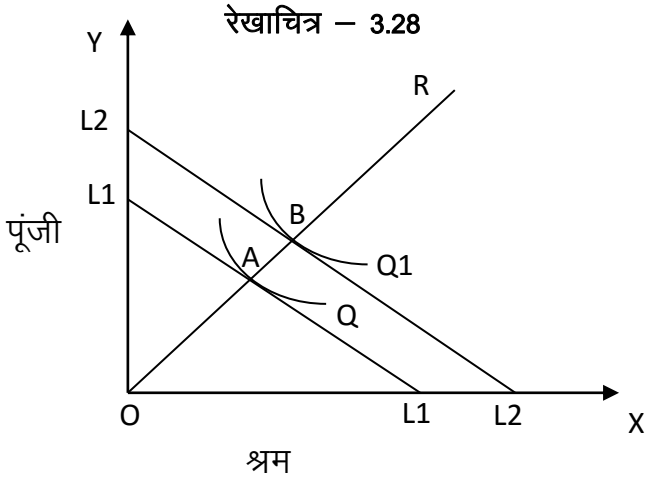

2. **श्रम बचतकारी तकनीकी परिवर्तन –** श्रम बचतकारी तकनीकी को पूंजी – गहन तकनीकी परिवर्तन के नाम से भी जाना जाता है। जब श्रम – पूंजी के दिए हुए अनुपात पर जब MRTSLK घटता है तो इसे श्रम बचतकारी तकनीकी परिवर्तन कहते है। इस तकनीकी परिवर्तन में पूंजी का सीमान्त उत्पाद, श्रम के सीमान्त उत्पाद की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक बढता है। इसलिए MRTSLK घटता है।

रेखाचित्र – 3.29 से स्पष्ट है कि दिए गए श्रम – पूंजी अनुपात पर MRTSLK का मूल्य कम होता जा रहा है। क्योंकि MPK, MPL के तुलना में अधिक बढती है।

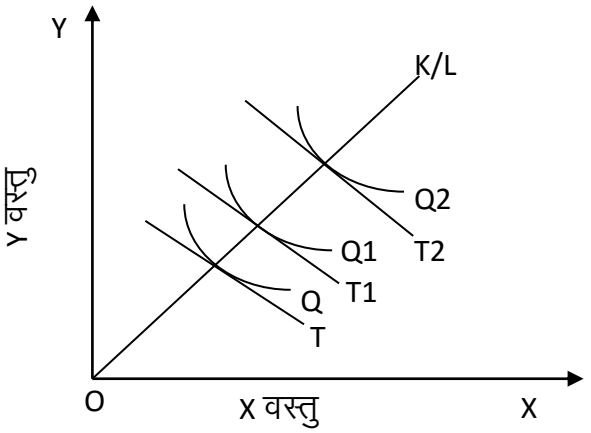

रेखाचित्र – 3.29

3. **पूंजी – बचतकारी तकनीकी परिवर्तन –** पूंजी बचतकारी तकनीकी परिवर्तन को श्रम – गहन तकनीकी परिवर्तन के नाम से भी जाना जाता है। इसमें दिए हुए पूंजी – श्रम अनुपात पर MRTSLK बढता है। इस प्रकार की तकनीकी परिवर्तन में MPL, MPK की तुलना में अधिक बढता है, इसलिए MRTSLK अधिक बढता है।

रेखाचित्र 3.30 से स्पष्ट है कि श्रम – पूंजी अनुपात के दिए होने पर MPL, MPK की तुलना में अधिक बढने के कारण MRTSLK का मूल्य अधिक होता रहता है।

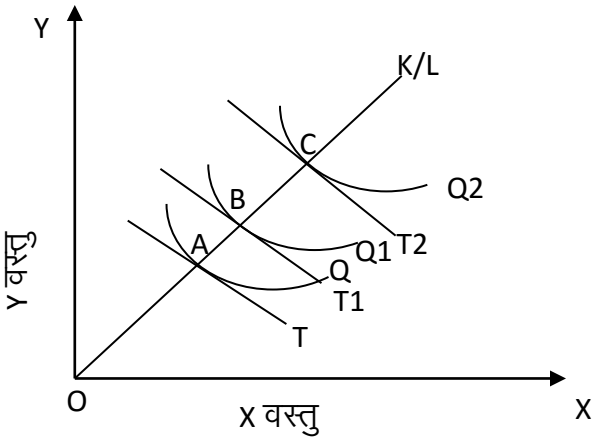

रेखाचित्र – 3.30

3.7 साधनो की प्रतिस्थापन लोच – इस अध्याय में हम उत्पादन के दो साधन श्रम व पूंजी को लेकर चल रहे है। प्रतिस्थापन लोच साधनों की कीमतों में परिवर्तन का प्रभाव एक साधन के दूसरे साधन के लिए स्थानापन्न का प्रभाव देखा जाता है। यह एक साधन को दूसरे साधन से प्रतिस्थापन्न करने की डिग्री को मापता है। यह धारणा जे0 आर0 हिक्स और जोन रोबिन्सन जैसे अर्थशास्त्रियों द्वारा दी गई थी।

$$\text{प्रतिस्थापन लोच} = \frac{\text{पूंजी – श्रम के अनुपात में अनुपातिक परिवर्तन}}{\text{तकनीकी प्रतिस्थापन दर में अनुपातिक परिवर्तन}}$$

$$\frac{K/L \text{ में अनुपातिक परिवर्तन}}{MRTS_{LK} \text{में अनुपातिक परिवर्तन}} = \frac{\dfrac{\Delta\left(\dfrac{K}{L}\right)}{\dfrac{K}{L}}}{\dfrac{\Delta MRTS_{LK}}{MRTS_{LK}}}$$

$$E_S = \frac{\Delta(K/L)}{\Delta(MRTS_{LK})} \times \frac{MRTS_{LK}}{K/L}$$

$$MRTS_{LK} = \frac{MP_L}{MP_K}$$

3.8 उत्पादन फलन की विशेषताएं :–उत्पादन फलन के कई प्रकार है। अलग – अलग उत्पादन फलन की विशेषताएं भी अलग – अलग हो सकती है। परन्तु इस अध्याय में हम केवल कॉब डगलस और सी ई एस उत्पादन फलन को ही लेकर चल रहे है। इन दोनो उत्पादन फलन की विशेषताओं का अध्ययन इस अध्याय में हम करेंगे।

3.8.1 कॉब डगलस उत्पादन फलन की विशेषताएं – कॉब डगलस उत्पादन फलन का विचार कॉब और डगलस द्वारा दिया गया था। इसका इस प्रकार से लिखा जा सकता है।

$Q=AL^{\alpha} K^{\beta}$

Q= उत्पादन

L= श्रम

K= पूंजी

A= तकनीकी स्थिरांक

α, β= स्थिरांक

CD उत्पादन फलन की विशेषताएं इस प्रकार है –

1 श्रम और पूंजी की मात्रा शून्य होने पर उत्पादन भी शून्य होगा।

2 अगर हम α और β के जोड़ को एक मान लेते है तो उत्पादन फलन रेखीय समरूप होगा।

$Q=AL^{\alpha} X^{\beta}$

माना $L=XL, K=XK$

$=A(XL)^{\alpha} (XK)^{\beta}$

$=AX^{\alpha} L^{\alpha} X^{\beta} X^{\beta}$

$=AX^{\alpha+\beta} L^{\alpha} K^{\beta}$

$= X^{\alpha+\beta} (AL^{\alpha}K^{\beta})$

$= X^{\alpha+\beta} (AL^{\alpha}K^{\beta})$

यहां पर $\alpha+\beta=1$

$Q=x(AL^{\alpha}X^{\beta})$

$Q=XQ$

यहां पर उत्पादन फलन रेखीय समरूप होता है।

3 यह उत्पादन फलन घटते प्रतिफल को दर्शाता है।

$Q=AL^{\alpha} X^{\beta}$

$\frac{\partial Q}{\partial L} = MPL=A\alpha L^{\alpha-1}K^{\beta}$

$= \frac{A\alpha L^{\alpha} K^{\beta}}{L}$

$\frac{\partial Q}{\partial K} = A\beta L^{\alpha}K^{\beta-1}$

$\frac{A\beta L^{\alpha}K^{\beta}}{K}$

इस प्रकार C-D उत्पादन फलन घटते प्रतिफल को प्रकट करता है।

4 C-D उत्पादन फलन युलर प्रमेय के अनुसार है। युलर प्रमेय को इस तरह लिखा जाता है।

$Q=L(\frac{\partial Q}{\partial L}) + K\frac{\partial Q}{\partial K}$

$\frac{\partial Q}{\partial L} = L.\alpha L^{\alpha-1}KB + K^{\beta}AL^{\alpha}K^{\beta-1}$

$=\alpha AL^{\alpha}K^{\beta}+\beta AL^{\alpha}K^{\beta}$

$=\alpha+\beta(AL^{\alpha}K^{\beta})$

$=\alpha+\beta(Q)$

यहां पर $\alpha+\beta=1$

$Q=Q$

इस प्रकार युलर प्रमेय भी सिद्ध होती है।

5. कॉब डगलस उत्पादन फलन में प्रतिस्थापन्न की लोच इकाई के बराबर होती है।

$$ES = \frac{\Delta\frac{K}{L}}{\frac{K}{L}} \div \frac{\frac{\Delta(MP_L)}{\Delta(MP_K)}}{\frac{MP_L}{MP_K}}$$

$$MP_L = \frac{\partial Q}{\partial L} = A\alpha L^{\alpha-1}K^{\beta}$$

$$MP_X = \frac{\partial Q}{\partial L} = A\beta L^{\alpha}K^{\beta-1}$$

$$\frac{MP_L}{MP_X} = \frac{A\alpha L^{\alpha-1}K^{\beta}}{A\beta L^{\alpha}K^{\beta-1}} = \frac{\alpha}{\beta}\bullet\frac{K}{L}$$

$$ES = \frac{\Delta\frac{K}{L}}{\frac{K}{L}} \div \frac{\Delta\left(\frac{\alpha}{\beta}\bullet\frac{K}{L}\right)}{\frac{\alpha}{\beta}\bullet\frac{K}{L}}$$

$$ES = \frac{\Delta\frac{K}{L}}{\frac{K}{L}} \div \frac{\frac{\alpha}{\beta}\Delta\left(\frac{K}{L}\right)}{\frac{\alpha}{\beta}\bullet\frac{K}{L}}$$

$$ES = 1$$

उस प्रकार प्रतिस्थापन की लोच यहां पर इकाई के बराबर है।

3.8.2 सी ई एस उत्पादन फलन की विशेषताएं

स्थिर प्रतिस्थापन लोच उत्पादन फलन का प्रतिपादन 1954 में एच. ओ0 डिकिसन द्वारा किया गया था। उसको इस तरह से लिखा जा सकता है।

$$Q=A[\alpha_1 K^{-\beta}+\alpha_2 L^{-\beta}]^{-\frac{1}{\beta}}$$

यहां पर Q = उत्पादन

L,K= श्रम व पूंजी

A, α_1, α_2, $-\beta$ = स्थिरांक

यहां पर $A>0$ है।

मुख्य विशेषताएं निम्न प्रकार है –

1. CES उत्पादन फलन में पूंजी और श्रम में प्रतिस्थापन लोच $\frac{1}{1+\beta}$ है।
2. प्रतिस्थापन लोच 0 और ∞ के बीच परिवर्तित होती है।
3. यह पहले दर्जे का समरूपीय उत्पादन फलन होगा।
4. CES उत्पादन फलन यूलर प्रमेय के साथ मेल खाती है।

3.9 सारांश

उत्पादन और लागत एक उत्पादक के लिए सबसे महत्वपूर्ण है। उत्पादन फलन से हमें पता चलता है कि आगतों के प्रयोग से कितना उत्पादन होगा। इस प्रकार लागतों का निर्धारण करना एक उत्पादक के लिए लाभ अधिकतम के उद्देशय से जरूरी है। एक उत्पादक का उद्देशय लाभ को अधिकतम करने का हो सकता है। लाभ अधिकतम करने के लिए आगम को अधिकतम करना होता है और लागतों को न्यनतम करने का होता हैं। परन्तु लागतों को न्यनतम करने से पहले लागतों का निर्धारण करना भी आवश्यक होता है। इस प्रकार उत्पादन व लागत का निर्धारण करना एक उत्पादक के लिए बहुत ज्यादा आवश्यक होता है। उत्पादन फलन में कॉब डगलस और सी ई एस दोनो महत्वपूर्ण फलन है। हमने इन दोनो उत्पादन फलनों की विशेषताओं का अध्ययन किया है।

3.10 मुख्य शब्दावली

उत्पादन फलन – एक उत्पादक के लिए आगतो और निर्गतो के बीच एक सम्बन्ध होता है। इस सम्बन्ध को उत्पादन फलन के रूप में जाना जाता है।

अल्पकाल – अल्पकाल समय की वह अवधि है जिसमें केवल परिवर्तनशील साधनों को ही बदला जाता है।

दीर्घकाल – दीर्घकाल समय की वह अवधि है जिसमें स्थिर तथा परिवर्तनशील दोनों प्रकार के साधनों को बढाया जा सकता है।

स्थिर साधन – स्थिर साधनों से अभिप्राय उन साधनों से है जिनको अल्पकाल में परिवर्तित नही किया जा सकता है।

परिवर्तनशील साधन – परिवर्तनशील साधनों से अभिप्राय उन साधनों से है जिनको अल्पकाल में ही परिवर्तित किया जा सकता है।

अल्पकालीन उत्पादन फलन – अल्पकालीन उत्पादन फलन केवल परिवर्तनशील साधनों का प्रभाव उत्पादन पर देखता है जबकि स्थिर साधनों के प्रभाव का अध्ययन नही किया जाता है।

दीर्घकालीन उत्पादन फलन – दीर्घकालीन उत्पादन फलन में परिवर्तनशील साधन और स्थिर साधन दोनों के प्रभाव का अध्ययन किया जाता है।

कुल उत्पाद – कुल उत्पाद से अभिप्राय एक निश्चित अवधि में एक फर्म द्वारा उत्पादित कुल वस्तुओं और सेवाओं के मूल्य से है।

सीमान्त उत्पाद – परिवर्तनशील साधन की इकाई को बढाने पर कुल उत्पाद में परिवर्तन को सीमांत उत्पाद कहते है।

औसत उत्पाद – औसत उत्पाद प्रति इकाई परिवर्तनशील साधन का उत्पाद है।

समोत्पाद वक्र –समोत्पाद वक्र श्रम और पूंजी के उन सभी संयोगों को दर्शाता है जिनसे समान मात्रा में किसी वस्तु का उत्पादन होता है।

तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर – यह वह दर है जिस पर एक साधन को दूसरे साधन से प्रतिस्थापित किया जाता है और उत्पादन स्थिर रहता है।

घटते तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर – इस नियम के अनुसार तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर लगातार कम होती रहती है।

पैमाने के बढते प्रतिफल – पैमाने के बढते प्रतिफल से अभिप्राय उस स्थिति से है जब साधनों की मात्रा में प्रतिशत परिवर्तन की तुलना में उत्पादन की मात्रा में प्रतिशत परिवर्तन अधिक हो।

पैमाने के समान प्रतिफल – पैमाने के समान प्रतिफल से अभिप्राय उस स्थिति है जब साधनों में जिस अनुपात में वृद्धि होती है उत्पादन में भी उसी अनुपात में वृद्धि हो।

पैमाने के घटते प्रतिफल – पैमाने के घटते प्रतिफल से अभिप्राय उस स्थिति है कि जिस दर से उत्पादन के साधनों को बढाया जाता है उत्पादन में भी उसी अनुपात में वृद्धि हो।

लागत – किसी वस्तु का उत्पादन करने के लिए एक उत्पादक को काफी सारे खर्चे वहन करने पडते है। इन सभी खर्चो को अर्थशास्त्र में लागत कहा जाता है।

अवसर लागत – अवसर लागत त्यागे गए सर्वश्रेष्ठ विकल्प की लागत होती है।

3.11 अपनी प्रगति जानिए के प्रश्न

1. अल्पकाल में केवल –––––––––––––– साधनों को बदला जा सकता है।
2. दीर्घकाल में दोनो –––––––––––– तथा –––––––– साधनों को बदला जा सकता है।
3. दीर्घकालीन उत्पादन फलन में –––––––––––– और ––––––– दोनो परिवर्तनशील है।
4. परिवर्तनशील अनुपात के नियम में पहले चरण में ––––––––– साधन के प्रतिफल होते है।
5. तीसरे चरण की स्थिति में सीमान्त उत्पाद शून्य होकर ––––––––– हो जाता है।
6. पहले चरण में औसत उत्पाद –––––––– स्तर पर पहुंच जाता है।
7. पहले चरण में कुल उत्पाद बढती तथा –––––––– दोनो दर से बढता है।
8. समोत्पाद वक्र की मुख्य मान्यता है कि श्रम और पूंजी आपस में ––––– है।
9. MRTSLK = _____
10. समोत्पाद वक्र मूल बिन्दू की ओर ––––––––––– होते है।
11. समलागत रेखा की ढाल =––––––––––––––
12. AC=AFC+ _____

3.12 अपनी प्रगति जानिए के उत्तर

1. परिवर्तनशील
2. स्थिर और परिवर्तनशील
3. श्रम और पूंजी
4. बढते
5. ऋणात्मक
6. अधिकतम
7. घटती
8. प्रतिस्थापक
9. $\Delta K/\Delta L$
10. उत्तल
11. PL/PK
12. AVC

3.13 अभ्यास हेतु प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. उत्पादन के नियम से क्या अभिप्राय है?
2. कुल उत्पाद क्या है ?
3. सीमान्त उत्पाद क्या है?
4. औसत उत्पाद क्या है?

5. परिवर्तनशील अनुपात का नियम क्या है?
6. समोत्पाद वक्र से क्या अभिप्राय है?
7. तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमान्त दर से क्या अभिप्राय है?
8. समलागत रेखा से आप क्या जानते है?
9. पैमाने के प्रतिफल से क्या अभिप्राय है?
10. तकनीकी परिवर्तन से क्या अभिप्राय है?
11. लागत क्या है?
12. अवसर लागत क्या है ?
13. स्पष्ट लागत से क्या अभिप्राय है ?
14. अस्पष्ट लागत से क्या अभिप्राय है ?
15. आन्तरिक बचते व हानियां क्या है ?
16. बाहरी बचते व हानियां क्या है ?
17. विस्तार पथ से क्या अभिप्राय है ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. अल्पकाल में उत्पादन के नियम या परिवर्तनशील अनुपातों के नियम की विस्तार से व्याख्या करे ?
2. समोत्पाद वक्र से क्या अभिप्राय है ? समोत्पाद वक्रों की मुख्य विशेषताओं का वर्णन करें ?
3. विस्तार पथ से आप क्या जानते है ? साधनों के अनुकूलतम संयोग की व्याख्या करे ?
4. पैमाने के प्रतिफल की विस्तार से व्याख्या करे ?
5. लागत से क्या अभिप्राय है ? इसके प्रकारों की भी व्याख्या करे ?
6. बहुउत्पाद फर्म का अनुकूलतम आगत संयोग का वर्णन करे ?
7. तकनीकी परिवर्तन और हिक्स के उत्पादन फलन की अवधारणा की व्याख्या करे?
8. कॉब डगलस उत्पादन फलन की विशेषताओं का वर्णन करे ?

3.14 आप भी पढ सकते है एवम् सन्दर्भ सूची

- Ahuga, H.L. (2016).Advance Economic Theory (6th edition). New Delhi: S. Chand & Company Pvt Ltd, Hindi Medium
- Jhingan, M.L. (2004). Micro Economics (2nd edition). New Delhi : Vrinda Publication Pvt Ltd. (Hindi Medium)
- Singh, S.P. (2013). Micro Econmics (2nd Edition). New Delhi: S Chand & Company Pvt Ltd, Hindi Medium
- Verma, K.N. (2014). Micro Economics Theory (2nd Edition). Jalandhar, Punjab: Vishal Publishing Co., Hindi Medium
- Dwivedi, D.N. (2006). Microeconomics Theory &Application (1st edition). New Delhi: Pearson Education in SouthAsia.
- Koutsoyiannis,A. (1975). Modern Microeconomics (2nd edition). London : Macmillan Publishers Ltd.

इकाई – 4

बाजार व कीमत निर्धारण

इकाई की रूपरेखा

4.0 परिचय
4.1 इकाई के उद्देश्य
4.2 बाजार की संरचना
  4.2.1 पूर्ण प्रतियोगिता बाजार की विशेषताएँ
  4.2.2 एकाधिकार बाजार की विशेषताएँ
  4.2.3 एकाधिकारात्मक बाजार की विशेषताएँ
  4.2.4 अल्पाधिकार बाजार की विशेषताएँ
4.3 पूर्ण प्रतियोगिता
  4.3.1 पूर्ण प्रतियोगिता में उद्योग का संतुलन
  4.3.2 पूर्ण प्रतियोगिता में कर्म का संतुलन
4.4 एकाधिकार
  4.4.1 एकाधिकार बाजार में कीमत का निर्धारण
  4.4.2 एकाधिकार बाजार उत्पन्न होने के कारण
  4.4.3 कीमत विभेदीकरण
  4.4.4 द्विपक्षीय एकाधिकार
4.5 एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता में संतुलन
4.6 कीमतों और उत्पादन का कल्याणकारी प्रभाव
  4.6.1 कीमत नियंत्रण का कल्याणकारी प्रभाव
  4.6.2 कीमत प्रोत्साहन का कल्याणकारी प्रभाव
  4.6.3 उत्पादन कोटा का कल्याणकारी प्रभाव
4.7 सारांश
4.8 मुख्य शब्दावली
4.9 अपनी प्रगति जानिए के प्रश्न
4.10 अपनी प्रगति जानिए के उत्तर
4.11 अभ्यास हेतु प्रश्न
4.12 आप ये भी पढ़ सकते है

4.0 परिचय

उत्पादक द्वारा वस्तु का उत्पादन करने के बाद लागत की गणना का अनुमान लगाना होता है क्योंकि एक उत्पादक अपने लाभ को अधिकतम करना चाहता है। एक उत्पादक उस उत्पादन की मात्रा पर काम करता है, जिस पर की उसके लाभ अधिकतम हो। परन्तु हमें पता है की लाभ आगम व लागत का अन्तर होता है। आगम प्राप्त करने के लिए वस्तु को बाजार में बेचना पड़ता है। इस प्रकार बाजार का अध्ययन करना हमारे लिए जरूरी हो जाता है। इस अध्याय में हम बाजार व बाजार के विभिन्न प्रकारो का अध्ययन करेंगे।

4.1 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के निम्न उद्देश्य हैः–

- बाजार की संरचना का अध्ययन करना
- बाजार में कीमत और संतुलित मात्रा का अध्ययन करना
- कीमतो और उत्पादन के कल्याणकारी प्रभाव का अध्ययन करना

4.2 बाजार की संरचना

बाजार की संरचना में हमें बाजार के प्रकार का अध्ययन करना होता है। बाजार चार प्रकार के होते है पूर्ण प्रतियोगिता, एकाधिकार, एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता और अल्पाधिकार। प्रत्येक तरह के बाजार में कीमत और उत्पादन मात्रा का निर्धारण अलग तरह से होता हैं। बाजार से अभिप्राय उस क्षेत्र से है जहाँ क्रेता विक्रेता मिलकर कीमत और मात्रा का निर्धारण करते है।

4.2.1 पूर्ण प्रतियोगिता बाजार की विशेषताएँ

पूर्ण प्रतियोगिता बाजार की वह स्थिती है जिसमें बहुत सारे क्रेता और विक्रेता एक समरूप वस्तु का समान कीमत पर क्रय विक्रय करते है। पूर्ण प्रतियोगिता में वस्तु समरूप होती है और कीमत समान होती है। कीमत का निर्धारण फर्म द्वारा न होकर उद्योग द्वारा होता है। परन्तु वारतविकता यह है की पूर्ण प्रतियोगिता नहीं पाई जाती है। परन्तु कुछ पूर्ण प्रतियोगिता के करीबी उदाहरण मिलते है। जैसे की गेंहूं का बाजार।

पूर्ण प्रतियोगिता की विशेषताएं निम्नलिखित है

1. **अनेक क्रेता और विक्रेता** – पूर्ण प्रतियोगिता में क्रेता और विक्रेताओ की संख्या अधिक होती है। विक्रताओ की अधिक संख्या होने के कारण प्रत्येक विक्रेया का योगदान काफी कम हो जाता है। इस प्रकार विक्रेता बाजार कीमत को प्रभावित नहीं कर सकता है। इस प्रकार कीमत मांग और पूर्ति की शक्तियों द्वारा निर्धारित होती है। क्रेता और विक्रेता को यह कीमत स्वीकार करने होती है।

2. **समरूप वस्तु** – क्रय – विक्रय करने के लिए वस्तु तकनीकी रूप से प्रत्येक विक्रेता की समान होती है। बेचे जाने वाली वस्तु आकार, गुण, रंग आदि में एक जैसी होती है।

3. **प्रवेश और जाने की स्वतंत्रता** – प्रत्येक फर्म को उद्योग में प्रवेश करने की और उद्योग से बाहर जाने की आजादी होती है।

4. **क्रेता और विक्रेता को पूर्ण ज्ञान** – क्रेता और विक्रेता को बाजार कीमत की पूरी सूचना होती है।

5. **उत्पादन के साधनो की पूर्ण गतिभीलता** – उत्पादन के साधन भूमि, श्रम, पूंजी और उद्यमशीलता की पूर्ण गतिशीलता होती है। उनके आवागमन पर कोई भौगोलिक प्रतिबंध नहीं होते है।

6. **यातायात लागतो का अभाव** – बाजार में एक समान कीमत रखने के लिए यह मान लिया जाता है की यातायात लागत शुन्य पाई जाती है।

7. **विक्रय लागतो का अभाव** – क्रेताओ को पूर्ण ज्ञान होने के कारण विज्ञापन लागत शुन्य हो जाती है।

4.2.2 एकाधिकार बाजार की विशेषताएँ

एकाधिकार बाजार वह बाजार है जिसमे केवल एक फर्म उद्योग में होती है और उसके निकटतम स्थापनापन्न नहीं होते है। भारतीय रेलवे एकाधिकार का उदाहरण है।

एकाधिकार की विशेषताएँ

1. **एक विक्रेता** – एकाधिकार बाजार मे केवल एक विक्रेता होता है। इसके परिणामस्वरूप बाजार में उद्योग ही फर्म होती है और फर्म ही उद्योग होती है।

2. **निकटतम स्थापनापन्न** – एकाधिकार बाजार में उत्पादित की गई वस्तु के निकटतम स्थानापन्न नहीं होते है।

3. **प्रवेश पर प्रतिबंध** – नई फर्मो के प्रवेश पर एकाधिकार में प्रतिबंध होते है। क्योंकि अगर नई कर्म बाजार मे प्रवेश कर लेती है तो एकाधिकार बाजार खत्म हो जाता है और फर्म को असामान्य लाभ मिलने खत्म हो जाते है।

4. **कीमत विभदीकरण** – एकधिकार बाजार में तकनीकी रूप से समरूप वस्तु का अलग – अलग उपभोक्ताओ से अलग – अलग कीमत वसूल की जाती है। उसे कीमत विभेदीकरण कहते है।

5. **कीमत निर्धारक**– एकाधिकार बाजार में केवल एक फर्म होने के कारण वही फर्म कीमत का निर्धारण करती है।

4.2.3. एकाधिकारात्मक बाजार की विशेषताएँ

एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता में पूर्ण प्रतियोगिता और एकाधिकार दोनो की विशेषताएँ शामिल होती है। एकाधिकारात्मक वह बाजार है जिसमें बडी संख्या में विक्रेता विभेदीकृत वस्तुओं को बेचते है। साबुन, टूथपेस्ट आदि एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता बाजार के उदाहरण है।

एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता की विशेषताएँ

(1) **अनेक विक्रेता** – बहुत सारी फर्मे विशेदीकृत उत्पाद को बाजार में बेचते है।
(2) **वस्तु विभेद** – प्रत्येक फर्म का उत्पाद अपने प्रतियोगी फर्म के उत्पाद से कुछ हद तक अलग होता है। उनके रंग, आकार में अन्तर होता है। एक फर्म का उत्पाद दूसरी फर्म उत्पाद का निकटम स्थापनापन्न होता है।
(3) **विक्रय लागते** – एकानिकारात्मक प्रतियोगिता के अंतर्गत प्रत्येक विक्रेता के उत्पाद एक दूसरे से अलग होते है। प्रत्येक विक्रेता को अपने उत्पाद के बारे में विज्ञापन करके बताया जाता है। इस प्रकार विज्ञापन पर व्यय करने के लिए विक्रय लागते उठानी पड़ती है।
(4) **प्रवेश और छोड़ने की आजादी** – एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता में नई फर्मो के बाजार में प्रवेश और पुरानी फर्मो को बाजार छोड़ने की आजादी होती है।
(5) **पूर्ण ज्ञान का अभाव** – क्रेताओ और विक्रेताओ को बाजार का पूर्ण ज्ञान नहीं होता है। क्योंकि बाजार में बहुत बड़ी संख्या में उत्पाद होते है।
(6) **कीमत निर्णय** – एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता में विक्रेता न तो पूरी तरह से कीमत स्वीकारक है और न ही कीमत निर्धारक है। प्रत्येक फर्म का अपने उत्पाद की कीमत पर आंशिक नियंत्रण होता है।
(7) **गैर – कीमत प्रतियोगिता** – बाजार में कीमत प्रतियोगिता के साथ गैर – कीमत प्रतियोगिता भी पाई जाती है। अपनी माँग को बढ़ाने के लिए उपभोक्ता की वस्तु के साथ उपहार भी दिए जा सकते है।

4.2.4 अल्पाधिकार बाजार की विशेषताएँ

अल्पाधिकार बाजार वह बाजार है जिसमें समरूप या विभेदीकृत उत्पाद के कुछ विक्रेता होते है। अल्पाधिकार बाजार में कुछ विक्रेताओ में प्रतियोगिता होती है। जब बाजार में केवल दो विक्रेता होते है तो उसे दयाधिकार कहते है।

अल्पाधिकार बाजार की विशेषताएँ

(1) **कुछ विक्रेता** – अल्पाधिकार बाजार में कुछ फर्मे होती है। लेकिन हम इनकी संख्या को निश्चित करके नहीं बता सकते है। प्रत्येक फर्म कुल माँग का एक महत्वपूर्ण हिस्से का उत्पादन करती है।

(2) **परस्पर निर्भरता** – अल्पाधिकार के अंतर्गत फर्मो में परस्पर निर्भरता होती है। यह परस्पर निर्भरता कुछ फर्मे होने के कारण होती है। क्योंकि एक फर्म का निर्णय दूसरी फर्म के निर्णय को प्रभावित करता है। प्रत्येक फर्म अपना निर्णय लेते समय दूसरी फर्म के सम्भावित निर्णय का भी ध्यान रखती है।

(3) गैर – कीमत प्रतियोगिता – एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता की तरह अल्पाधिकार बाजार में भी गैर – कीमत प्रतियोगिता पाई जाती है। क्योंकि कीमत को परिवर्तित में फर्म को यह डर रहता है कि दूसरी फर्म भी उससे ज्यादा कीमत परिवर्तित कर सकती है। इसलिए फर्मे माँग को बढ़ाने के लिए दूसरे उपाये पर अधिक ध्यान रखती है।

(4) **फर्मो के प्रवेश पर प्रतिबंध** – अल्पाधिकार में कुछ फर्मे होती है। कुछ फर्मे होने कारण फर्मो को असामान्य लाभ हो सकते है। अगर बाजार में ज्यादा फर्मे आ जाती है तो उनके असामान्य लाभ खत्म हो सकते है। इसलिए फर्मो के प्रवेश पर प्रतिबंध होता है।

(5) **विक्रय लागत** – ज्यादा प्रतियोगिता होने के कारण और परस्पर निर्भरता होने के कारण बिक्री को बढ़ाने के लिए विभिन्न तकनीको का इस्तेमाल कर सकती है। इसलिए अल्पाधिकार बाजार में विज्ञापनों पर ज्यादा जोर दिया जाता है।

(6) **समूह व्यवहार** – अल्पाधिकार बाजार में फर्मे ज्यादा लाभ कमाने के लिए समूह व्यवहार करती है। क्योंकि इससे सभी फर्मो के हितो का संरक्षण होता है। अगर एक कर्म कीमत कम करती है तो यह संभावना रहती है की दूसरी फर्म उससे ज्यादा कीमत कम कर दे।

(7) **वस्तु की प्रकृति** – अल्पाधिकार बाजारे में उत्पाद समरूप या विभेदीकृत हो सकते है।

(8) **अनिश्चित मांग वक्र** – अल्पाधिकार बाजारे में मांग वक्र का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। क्योंकि यह नहीं पता होता की अगर एक फर्म कीमत में परिवर्तन करती है तो दूसरी फर्म कीमत में कितना परिवर्तन करेगी या नहीं करेगी।

4.3 पूर्ण प्रतियोगिता

पूर्ण प्रतियोगिता वह बाजार है जिसमें समरूप वस्तु के अनेक विक्रेता होते है और समान कीमत पर विक्रय करते है। विज्ञापन लागत पूर्ण प्रतियोगिता में शून्य होती है।

4.3.1 पूर्ण प्रतियोगिता में उद्योग का संतुलन

जैसा की हम जानते है की पूर्ण प्रतियोगिता में फर्म कीमत स्वीकारक होती है और उद्योग कीमत निर्धारक होते है। इस प्रकार कीमत बाजार में माँग और पूर्ति की शक्तियो द्वारा निर्धारित होती है। पूर्ण प्रतियोगिता उद्योग का संतुलन उस कीमत पर होता है जिस पर की उस वस्तु की माँग, वस्तु की पूर्ति के बराबर हो। जैसा की हमे ज्ञान है की कीमत का माँग के साथ ऋणात्मक संबंध होता है और पूर्ति का कीमत के साथ धनात्मक संबंध होता है। जिस कीमत पर उद्योग की माँग व पूर्ति बराबर होती है उसे संतुलित कीमत कहते है। संतुलित कीमत पर न तो मांग आधिक्य होता है और न ही पूर्ति आधिक्य होती है।

रेखाचित्र – 4.1 से स्पष्ट है की OP कीमत पर वस्तु की मांग वस्तु की पूर्ति के बराबर है। यहाँ पर वस्तु की माँग भी OQ है और वस्तु की पूर्ति भी OQ है। यहाँ पर OP संतुलित कीमत है और OQ संतुलित मात्रा है। OP से अधिक कीमत होने पर वस्तु की

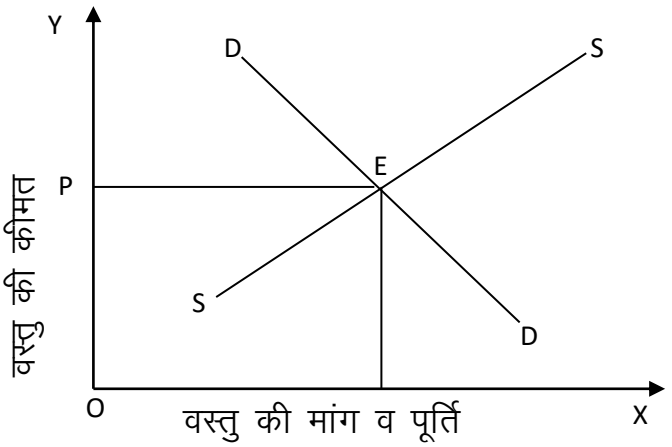

रेखाचित्र – 4.1 उद्योग का संतुलन

पूर्ति वस्तु की माँग से अधिक हो जाती है और पूर्ति आधिक्य की स्थिती उत्पन्न हो जाती है। इसी तरह कीमत कम हो जाने पर वस्तु की माँग वस्तु की पूर्ति से अधिक हो जाती है और माँग आधिक्य की स्थिती उत्पन्न हो जाती है। E बिन्दु पर संतुलन हो जाता है। उद्योग द्वारा निर्धारित की गई कीमत OP फर्म द्वारा स्वीकार कर ली जाती है। पूर्ण प्रतियोगिता में फर्म को जितना भी बेचना है उस OP कीमत पर बेचना होगा। संतुलित कीमत पर न तो पूर्ति का आधिक्य होता है और न ही माँग का आधिक्य होता है।

4.3.2 पूर्ण प्रतियोगिता में फर्म का संतुलन

फर्म वह इकाई है जो समरूप वस्तु का उत्पादन करती है। यहाँ पर संतुलन का मतलब विश्राम की अवस्था है जिसको की फर्म परिवर्तन करने की नहीं सोचती है। परम्परावादी अर्थशास्त्रियों के अनुसार फर्म का संतुलन वह अवस्था है जिसमें फर्म को अधिकतम लाभ होते है। अधिकतम लाभ होने पर फर्म को अधिकतम लाभ होते है। अधिकतम लाभ होने पर फर्म परिवर्तन करने की नहीं सोचती है। संतुलन की स्थिति में फर्म न तो उत्पादन बढ़ाती है और न ही उत्पादन कम करती है। फर्म के संतुलन की दो विधियाँ है एक तो कुल आगम और कुल लागत दृष्टिकोण तथा दूसरा सीमान्त आंगम और सीमान्त लागत दृष्टिकोण। यहाँ पर हम सीमान्त आगम और सीमान्त लागत दृष्टिकोण का अध्ययन करेंगे।

फर्म के संतुलन की दो शर्ते है –

(1) MR = MC

(2) MC वक्र MR वक्र को नीचे से काटती हो।

इसको रेखाचित्र की सहायता से समझ सकते है।

रेखाचित्र में फर्म का संतुलन OQ पर होगा। क्योंकि OQ उत्पादन पर MR और MC बराबर है और MC वक्र MR वक्र को नीचे से काटती है। यह संतुलन की शर्त है। इसके बाद फर्म का इस संतुलन में असामान्य लाभ, सामान्य लाभ और न्यूनतम हानि भी हो सकती है।

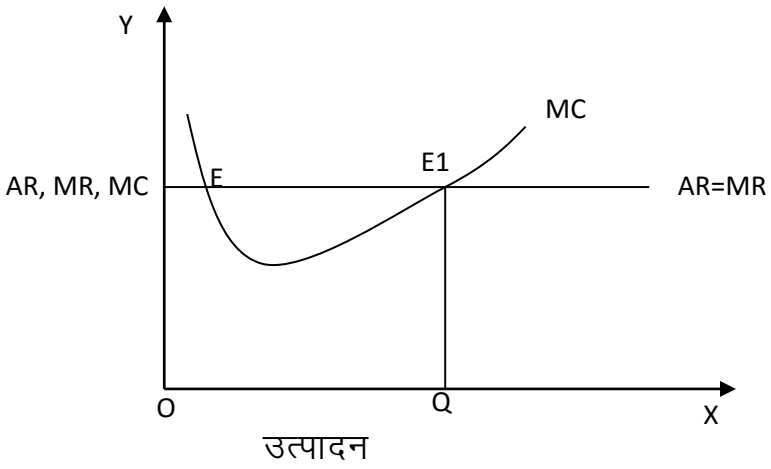

4.4 एकाधिकार

एकाधिकार बाजार वह बाजार है जिसमें किसी वस्तु का केवल एक विक्रेता होता है और निकटतम स्थानापन्न नहीं होते है। नई फर्मों का प्रवेश भी सम्भव नहीं होता है।

4.4.1 एकाधिकार बाजार में कीमत का निर्धारण

एकाधिकार बाजार में पूर्ण प्रतियोगिता की तरह संतुलन होता है। यहाँ भी संतुलन की दो शर्ते है –

(1) MR = MC

(2) MC, MR को नीचे से काटे।

परन्तु पूर्ण प्रतियोगिता से उल्ट एकाधिकार में AR और MR वक्र नीचे की ओर गिरे होते है। इसको चित्र की सहायता से दिखा सकते है।

रेखाचित्र 4.3

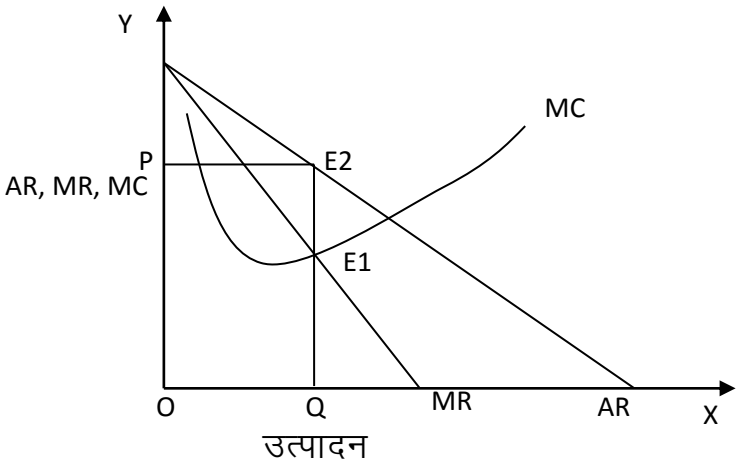

कीमत का निर्धारण वहाँ होता है जहाँ पर MR और MC बराबर हो और MC वक्र MR को नीचे से काटे। इस प्रकार E बिन्दु पर संतुलन है और OP कीमत का निर्धारण होता है। इस कीमत पर अल्पकाल में सामान्य लाभ, असामान्य लाभ और अल्पकालीन हानि हो सकती है, लेकिन दीर्घकाल में हमेशा असामान्य लाभ होगे।

4.4.2 एकाधिकार बाजार उत्पन्न होने के कारण

एकाधिकार के उदय के मुख्य कारण निम्नलिखित है–

1. **सरकारी लाइसैंस** – लाइसैंस एक तरह की अनुमति है जो कि सरकार उत्पादन करने के लिए उत्पादक को देती है। लाइसैंस जिस फर्म को मिल जाता है, उसके बाद अन्य फर्म इसका उत्पादन नहीं कर सकती है। सरकारी लाइसेंस मिलने के कारण एकाधिकार का जन्म होता है।

2. **पेटेन्ट अधिकार** – फर्म को सरकारे उनके शोध में उठाये गए जोखिम के ऐवज में पुरस्कार के रूप में पेटेन्ट अधिकार देती है। इसके कारक एकाधिकार का जन्म होता है।

3. **कार्टेल** – फर्म आपस में मिल जाती है, जिससे की वे कुल उत्पादन को नियत्रंण में रख सके।

4. **कच्चे माल पर नियंत्रण** – कच्चे माल पर भी नियंत्रण होने के कारण विशेष फर्म का बाजार पर नियंत्रण हो जाता है।

4.4.3 कीमत विभेदीकरण

कीमत विभेद से अभिप्राय है की विक्रेता एक ही वस्तु के लिए अलग – अलग कीमते वसूल करती है। यह तीन प्रकार का होता है।

(1) **व्यक्तिगत कीमत विभेद** – इसमे समान वस्तु को विभन्न कीमतो पर अलग – अलग क्रेताओ को बेचा जाता है।

(2) **स्थान कीमत विभेद** – इसमें समान वस्तु को अलग – अलग कीमतो पर विभिन्न स्थनो पर बेचा जाता है।

(3) **प्रयोग कीमत विभेद** – इसमें अलग – अलग कीमते अलग – अलग प्रयोगो के लिए वसूल की जाती है।

4.4.4 द्विपक्षीय एकाधिकार

द्विपक्षीय एकाधिकार में केवल एक विक्रेता होता है और एक ही खरीददार होता है।

4.5 एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता में संतुलन

पिछले अध्यायो में हमने पूर्ण प्रतियोगिता और एकाधिकार बाजार का अध्ययन किया है। परन्तु वास्तविक जीवन में न तो पूर्ण प्रतियोगिता पाई जाती है और न ही एकाधिकार बाजार होता है। वास्तविक जीवन में इन दोनो बाजारो के बीच की स्थिती पाई जाती है। इन दोनो बाजारो के बीच की स्थिती को हम यहाँ पर एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता कह रहे है। यहाँ पर फर्म का अपने उत्पाद पर एकाधिकार भी होता है। क्योंकि इस बाजार में विभेदीकृत उत्पाद पाएं जाते है विभेदीकृत उत्पाद के कारण स्वंय का अपने उत्पाद पर अधिकार पाया जाता है। परन्तु इस बाजार मे एक फर्म के उत्पाद की अन्य फर्मो के उत्पाद के साथ प्रतियोगिता भी पाई जाती है। क्योंकि एक उत्पाद दूसरे उत्पाद का निकटतम स्थानापन्न होता है। इसकी विशेषताओ का हमने पिछले अध्यायों में अध्ययन किया है। अब हम इस बाजार में संतुलन का अध्ययन करेगें।

अन्य बाजारो की तरह यहाँ पर फर्म के संतुलन की शर्त भी अन्य बाजारो की तरह है – (1) MR = MC (2) MC वक्र MR को नीचे से काटे।

रेखाचित्र 4.4 में E बिन्दु पर संतुलन है। यहाँ पर फर्म के संतुलन की दोनो शर्ते पूरी हो जाती है। यहाँ पर MR और MC बराबर है और MC वक्र MR वक्र को नीचे से काटती है। संतुलन की इस स्थिती में फर्म को अधिकतम लाभ होते है। अल्पकाल में फर्म को हानि, असामान्य लाभ और सामान्य लाभ हो सकते है, लेकिन दीर्घकाल में कर्म को केवल सामान्य लाभ ही होते है।

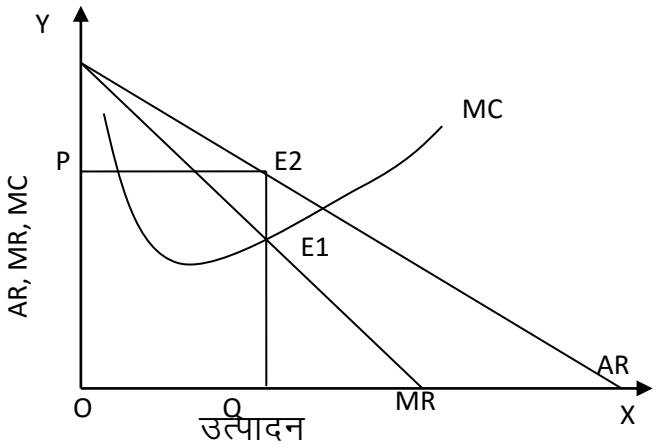

रेखाचित्र 4.4

4.6 कीमतो और उत्पादन का कल्याणकारी प्रभाव

4.6.1. कीमत नियंत्रण का कल्याणकारी प्रभाव

कीमत नियंत्रण होने से संतुलित कीमत अधिक हो जाती है और उपभोक्ता से जो कीमत वसूल की जाती है वह कम होती है। सरकार उपभोक्ता की आवश्यक वस्तओं की कीमतो को नियंत्रित करती है। संतुलित कीमत इतनी ज्यादा होती है की उपभोक्ता उनको वहन नहीं कर सकता है। कीमत नियंत्रण को उच्चतम कीमत भी कहते है। उच्चतम कीमत ऐसी अधिकतम कीमत है तो उपभोक्ताओ के लिए सतुलन कीमत से कम तय की जाती है। कीमत पर नियंत्रण होने से जरूरी वस्तुओ की पहूँच सभी उपभोक्ताओ तक हो जाती है। जिससे की उपभोक्ताओ का कल्याण बढ़ जाता है। उपभोक्ताओ की बचत भी बढ़ जाती है। परन्तु उसके कुछ नुकसान भी होते है।

नियंत्रित कीमत पर पूर्ति से ज्यादा वस्तु की मॉग होती है। जिससे की उस वस्तु की कालाबाजरी बढ़ती है और राशन दुकानो से प्राप्त करने में कठिनाई होती है।

4.6.2 प्रोत्साहन कीमत का कल्याणकारी प्रभाव

प्रोत्साहन कीमत को न्युनतम कीमत भी कहते है। न्यूनतम कीमत संतूलित कीमत से ऊपर सरकार द्वारा तय होती है। यह सरकार उत्पादको के लिए तय करती है। जब सरकार को लगता है की संतुलित कीमत उत्पादको को लाभकारी नहीं है तो सरकार कीमत को अधिक तय कर देती है। गेंहु का न्यूनतम समर्थन मूल्य प्रोत्साहन कीमत का ही उदाहरण है। प्रोत्साहन कीमत उत्पादको के हितो को ध्यान में रखकर तय की जाती है। इससे उत्पादको के कल्याण में वृद्धि होती है। परन्तु यह बाजार में पूर्ति आधिक्य पैदा कर देती है। परन्तु सरकार इनसे बफर स्टॉक को बढ़ा लेती है।

4.7 सारांश

बाजार एक ऐसी प्रणाली है जिसमें क्रेता और विक्रेता कीमत और मात्रा के निर्धारण के लिए मिलते है। परन्तु इस प्रणाली के कई रूप हो सकते है। यह प्रणाली पूर्ण प्रतियोगिता, एकाधिकार, एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता और अल्पाधिकार के रूप मे हो सकती है पूर्ण प्रतियोगित में एक जैसी वस्तु के अनेक विक्रेता होते है। इस बाजार मे कीमत का निर्धारण मांग और पूर्ति की शक्तियो द्वारा होता है। एकाधिकार में केवल एक विक्रेता होता है। कीमत का निर्धारण उत्पादक करता है। जबकि एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता एकाधिकार और पूर्ण प्रतियोगिता के बीच की स्थिती होती है।

4.8. मुख्य शब्दावली

- **पूर्ण प्रतियोगिता :–** यह बाजार की वह स्थिति है जिसमें बहुत सारे क्रेता और विक्रेता एक समरूप वस्तु का समान कीमत पर क्रय – विक्रय करते है।
- **एकाधिकारः–** यह बाजार की वह स्थिति है जिसमे केवल एक फर्म उद्योग में होती है। अर्थात् जिसका केवल एक ही विक्रेता है।
- **एकाधिकारात्मक :–** यह बाजार की वह स्थिति है जिसमें बड़ी संख्या में विभेदीकृत वस्तुओ को बेचा जाता है।
- **अल्पाधिकार :–** यह बाजार की वह स्थिति है जिसमें समरूप या विभेदीकृत उत्पाद के कुछ विक्रेता होते है।

4.9 अपनी प्रगति जानिए के प्रश्न

(1) पूर्ण प्रतियोगिता मे ..... क्रेता तथा विक्रेता होते है।
(2) एकाधिकार में केवल ..... विक्रेता होता है।
(3) एकाधिकारात्मक एकाधिकार में ..... क्रेता तथा विक्रेता होते है।
(4) पूर्ण प्रतियोगिता में ..... वस्तुएं होती है।
(5) एकाधिकारी बाजार में .....वस्तुएं होती है।
(6) अल्पाधिकार बाजार में ..... तथा ..... वस्तुएं होती है
(7) द्विपक्षीय एकाधिकार में केवल एक ..... तथा एक..... होता है।
(8) पूर्ण प्रतियोगिता में प्रवेश और छोड़ने की ..... होती हैं।
(9) एकाधिकारात्मक बाजार में प्रवेश और छोड़ने की ..... नहीं होती है।
(10) अल्पाधिकार बाजार में ..... पाई जाती है।

4.10 अपनी प्रगति जानने के उत्तर

1 अनेक
2 एक

3 कुछ
4 समरूप
5 विभेदीकृत
6 समरूप तथा विभेदीकृत
7 एक क्रेता तथा एक विक्रेता
8 आजादी
9 आजादी नही होती
10 परस्पर निर्भरता

4.11 अभ्यास हेतू प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1 पूर्ण प्रतियोगिता से क्या अभिप्राय है?
2 एकाधिकार से आप क्या समझते है ?
3 एकाधिकात्मक बाजार से क्या अभिप्राय है ?
4 अल्पाधिकार बाजार से आप क्या समझते हो ?
5 कीमत विभेदीकरण से क्या अभिप्राय है ?
6 द्विपक्षीय विभेदीकरण से आप क्या समझते है?
7 उत्पादन कोटा क्या है ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1 पूर्ण प्रतियोगिता क्या है ? इसकी सभी विशेषताओं का वर्णन करे ?
2 एकाधिकार बाजार क्या है इसकी विशेषताएं बताईए ?
3 कीमत विभेदीकरण की विस्तार से व्याख्या करे ?
4 उत्पादन कोटा से आप क्या समझते है ? विस्तार से व्याख्या करे ?

4.12 आप ये भी पढ़ सकते है एवम् सन्दर्भ सूची।

- Ahuja, H.L. (2016).Advance Economic Theory (6th Edition) New Delhi : S.Chand & Company Pvt. Ltd., Hindi medium.
- Hingan, M.L.(2004). Micro Economics (2nd Edition), New Delhi : Vrinda Publication Pvt. Ltd. (Hindi medium).
- Singh, S.P. (2013). Micro Economics (2nd edition), New Delhi : S Chand & company Pvt. Ltd., Hindi Medium.
- Verma, K.N. (2014). Micro Economic Theory (2nd edition). Jalandhar, Punjab : Vishal Publishing Co., Hindi Medium.
- Dwivedi, D.N. (2006). Micro-economics Theory & Appliation (1st Edition). New Delhi : Pearson Educatin in SouthAsia.
- Koutsoyiannis,A. (1975). Modern Micro-economics (2nd edition). Landon : Macmillan Publishers Ltd.